ISSN 2394-8485

मासिक

गुरमत ज्ञान

३/-

ज्येष्ठ-आषाढ़ संवत् नानकशाही ५५५ जून 2023 वर्ष १६ अंक १०

बाबा बंदा सिंघ बहादुर

जिन पर झंडे झूले हैं,
वे खड़ी अभी दीवारें हैं।

शेर-ए-पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ के चले जाने के बाद भी सिक्ख राज की चढ़दी कला (प्रफुल्लता) का प्रमाण

सन् १८४२ में खालसा राज और चीन के मध्य एक ऐतिहासिक संधि (Treaty) हुई। सीना चौड़ा और सिर ऊँचा हो जाता है हमारे बुज़ुर्गों की प्राप्तियों को देख कर। प्रधानमंत्री नेहरू ने चीन को यह संधि बार-बार याद करवाई। कौमी गौरव और चढ़दी कला की सरबुलंदी है यह संधि। इसमें खालसा राज को सारे संसार का बादशाह 'सिरी खालसा जी साहिब' 'King of the World, Siri Khalsa Ji Sahib' और चीन के बादशाह को (खगन) 'चीन का बादशाह' (Khagan) को 'Emperor of China' लिखा। इस संधि की शुरूआत में 'Now in the presence of God' अंकित किया। सबसे अहम नुक्ता इस संधि का है कि इसकी मीआद 'Till the world lasts' तक लिखी गई है। हमारे बुज़ुर्गों की दृढ़ता, स्पष्टता तथा हिम्मत के साथ किये समझौते और वर्तमान में किये समझौतों का हश्र देख कर ....। इसमें बादशाहत शेर-ए-पंजाब की नहीं, बल्कि सिरी खालसा जी साहिब की स्वीकार की गई। साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की आशीष सदा-सदा ख़ालसा के अंग-संग है।

('संत सिपाही' में से)

इन ग्रीब सिंघन को दयै पतिशाही,
ए याद रखैं हमरी गुरिआई।

ISSN 2394-8485

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमत ज्ञान

ज्येष्ठ-आषाढ़, संवत् नानकशाही 555
वर्ष 16 अंक 10 जून 2023

संपादक : सतविंदर सिंघ
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	10 रुपये
आजीवन (देश)	100 रुपये
सालाना (विदेश)	250 रुपये
प्रति कापी	3 रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर साहिब -143006

फोन : 0183-2553956-60

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग 303 संपादन विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार 4

संपादकीय 5

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की मीरी-पीरी का सिद्धांत 7
-डॉ. कशमीर सिंघ नूर

अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी 10
-डॉ. मनजीत कौर

भक्त कबीर जी की बाणी में विचारधाराई तत्व 14
-डॉ. राजेन्द्र सिंघ साहिल

माधो दास से बाबा बंदा सिंघ बहादुर . . . 16
-डॉ. तेजिंदर पाल सिंघ

आत्मिक सुख का बैकुंठ श्री हरिमंदर साहिब . . . 23
-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ

श्री अकाल तख़्त साहिब 30
-प्रिं. नरिंदर सिंघ सोच (दिवंगत)

महाराजा रणजीत सिंघ की पंथक सोच 37
-स. हरभजन सिंघ

गुरबाणी की भाषा : गुरमुखी 39
-डॉ. चमकौर सिंघ

भाई वीर सिंघ की रचनाओं के अनुसार गुरमति-मार्ग 47
-डॉ. परमजीत कौर

गुरबाणी विचार

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥५ ॥ (पन्ना १३४)

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में आषाढ़ महीने की अति ग्रीष्म की ऋतु के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य-मात्र को सांसारिक इच्छाओं के अत्यधिक बुरे प्रभाव से बचकर जीवन रूपी रात्रि को न गंवाने तथा सतिगुरु जी की रूहानी अगुआई को प्राप्त करते हुए परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त करने का अंतिम उद्देश्य पूरा करने की निर्मल प्रेरणा बख़्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि आषाढ़ का महीना भले ही अत्यंत गर्मी वाला है लेकिन यह गर्मी उन मनुष्यों को महसूस होती है जिनके पास परमात्मा का नाम नहीं है। कहने से तात्पर्य, आषाढ़ महीने की कठोर उष्मा से परमात्मा के सदैव शीतल नाम की ओट में रहकर बचाव पूर्णत: संभव है। गुरु जी कथन करते हैं कि यह माह उसको गर्म लगता है जिसने सारे विश्व के सृजनहार को भुला दिया है और मनुष्य से ही आशा लगा रखी है। सदीवी सुख परमात्मा के नाम की ओट में ही है।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि प्रभु के बिना किसी भी अन्य का सहारा चाहने अथवा लेने में व्यर्थ की भटकना है। यह गले में यम की फांसी पड़ने के तुल्य है। ऐसा मनुष्य मस्तक पर लिखे अनुसार ही फल पाता है अर्थात् सदैव भय में रहता है। जीवन रूपी रात यूं ही चली जाती है और अंतिम समय में मनुष्य को निराशा हाथ लगती है।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि जीवन के आषाढ़ महीने में जिनका साधु अथवा सतिगुरु से साक्षात्कार हो गया वे प्रभु-दरबार में मुक्त हैं। हे प्रभु मालिक! अपनी कृपा करना! मेरे मन में भी आपके दीदार की प्यास जग जाए! यही प्रार्थना है। हे प्रभु! मुझे सतिगुरु द्वारा ज्ञान हो जाए कि आपके बिना कोई भी अन्य मेरे साथ नहीं है। जिस मनुष्य के हृदय में प्रभु-चरणों का निवास है उसको ग्रीष्म ऋतु से जुड़ा आषाढ़ महीना भी सुखदायी लगता है।

संपादकीय

पंथ-विरोधी तत्त्व कुत्सित षड़यंत्रों से बाज़ आएं!

इतिहास इस बात का गवाह है कि सिक्ख कौम के वारिसों ने हमेशा ही मानवता के लिए हक, सत्य, न्याय की ख़ातिर संघर्ष करते हुए शहादतों की लम्बी दास्तान को सृजित किया है। दूसरी तरफ़ जिनके पूर्वजों ने कौमपरस्ती या केवल ज़र, जोरू, ज़मीन की ख़ातिर महायुद्ध किए थे, उन्हें मानवतावादी हक, सच, न्याय की बात हमेशा बग़ावत लगती रही। भारतीय तवारीख में जून का महीना इसी कौमी किरदार की भिन्नता का प्रतिनिधित्व करता है।

सिक्ख नसलकुशी की मंशा से किया गया घल्लूघारा जून १९८४ ई। मानवता को अति शर्मसार कर देने वाला कार्य था। मानवता के सर्वसाझे पवित्र धार्मिक स्थान श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब और श्री श्री अकाल तख़्त साहिब पर उस देश की हकुमत तोपों, टैंकों के साथ हमलावर होकर आई थी, जिस देश को हज़ारें वर्षो की गुलामी के बाद असंख्य कुबानियां देकर सिक्ख कौम ने आज़ाद करवाया थ। जून १९८४ ई.के घल्लूघारे में सिक्खों का कौमी नुकसान करने की मंशा से हज़ारों बेकसूर सिंघों, सिघनियो, बुजुर्गों, नौजवानों और बच्चों को तोपों, टैंकों, बंदूकों के साथ शहीद कर दिया गया। ऐसा वहशियाना मंजर देखकर इस प्रकार लगता था, जैसे आज़ादी मिलने के पश्चात्त इन हमलावरों की कबीलों वाली जंगली वृत्ति जाग उठी हो, जो सिक्खों को मारो, जलाओ और तबाह कर दो वाली विचारधारा की धारक बन गई हो।

सांप्रदायिक ताकतों का हृदय जून १९८४ ई. के घल्लूघारे से भी नहीं पसीजा। सर्वसाझीवालता (समता) का यह केंद्र पंथ-विरोधी लोगो की आँखों में सदा खटकता रहा है। आज देश-विदेश से श्री हरिमंदर साहिब से आ रही संगत की लम्बी-लम्बी कतारों, यहाँ पर सिक्ख, हिंदू, बौधी, जैनी, यहूदी, पारसी, मुस्लिम, ईसाई आदि सबके साथ किये जाते एक समान जैसे प्यार, सत्कार, व्यवहार के कारण विशव भर में फैल रहा सिक्ख फलसफे का प्रकाश और प्रताप, ईर्ष्या की आग में जल रहे कुछ मनमुख लोगों को बरदाश्त नहीं हो रहा। पिछले कुछ समय से देश की शरारती एजेंसियों के माध्यम से सोची-समझी साजिश के अंतर्गत षड्यंत्र रच कर श्री दरबार साहिब के प्रबंध पर अनावश्यक प्रशन खड़े किए गए। एक ख़ास पक्ष के हाथों में बिकाऊ मीडिया ने इसे 'खालिस्तान' के साथ जोड़ कर एड़ी चोटी का जोर लगा कर ज़हर उगला ताकि संगत दहशत में आकर श्री दरबार साहिब आना बंद कर दे। जब इन षड़यंत्रों का और मीडिया के झूठे प्रचार का कोई प्रभाव न पड़ा, तो शरारती एजेंसियाँ इतनी घटिया सोच पर उतर आईं जिसके बारे में आम मनुष्य सोच भी नहीं सकता। शरारती तत्त्वों ने श्री दरबार साहिब में आने वाली संगत में दहशत का माहौल पैदा करने के लिए श्री दरबार साहिब के समीप विरासती मार्ग और गलियारे में क्रमशः तीन बम धमाके करवाए, जो कि अति निंदनीय

घटनाक्रम है। इन सबका उद्देश्य श्री अमृतसर साहिब (पंजाब) में आतंकवाद का भय उत्पन्न कर संगत में दहशत का माहौल बनाना था। शरारती तत्त्वों को इतिहास से सबक लेना चाहिए। रूहानियत स्रोत्र, सर्वसझीवालता के केंद्र श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब की तरफ जिस भी राज-सत्ता ने मलिन आँख से देखा है, आखिर उस का पतन अवश्य हुआ है। आज पंथ-विरोधी ताकतों द्वारा सोची-समझी साजिश के अंतर्गत चारों वरणों को साझा उपदेश देने वाले, समूह मानवता को अपने स्वंग में लेने वाले पावन श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बेअदबी करवाने की कार्यवाहियां करवाई जा रही हैं, जोकि शर्मनाक और निंदनीय घटनाक्रम है।

सिक्ख कौम के साथ समय की हकुमतों द्वारा ज्यादती किए जाने के कारणों की कई परतें हैं, परन्तु इन सब के पीछे मूल रूप से सिक्खों के उच्च किरदार, न्यारे सिक्खी स्वरूप, आदर्श विचारधारा, सिक्खी शूरवीरता आदि के प्रति ईर्ष्या की भावना सामने आती है।

ऐसी सांप्रदायिक-विचारधारा मानवता को पतन की तरफ ले जायेगी। मानवता के सामने तो पहले से ही बहुत-सी समस्याएँ खड़ी हैं। आधुनिक युग में मानवीय अस्तित्त्व को बरकरार रखना ही अपने आप में एक बड़ी समस्या बनता जा रहा है, क्योंकि जिस हद तक धरती के नीचें का पानी क़म हो रहा है, धरती पर प्रदूषण और तापमान निरंतर बढ़ रहा है। अत्यधिक उत्पादन के चक्कर में फसलों पर कीटनाशकों का बेतहाशा छिड़काव हो रहा है, जिस कारण हवा, पानी और खाद्द पदार्थ ज़हरीले हो रहे हैं, यदि यह सब कुछ इसी प्रकार चलता रहा तो इस धरती पर जीवन का अस्तित्त्व हाशिए पर पहुँच जायेगा। जो सांप्रदायिक शक्तिया आज उक्त समस्या और मानवीय जीवन-मूल्यों से किनारा कर अपनी पूरी शक्ति लगा कर दूसरी कौमों को ख़त्म करने में व्यस्त हैं, ऐसी दशा पर पहुँच कर वे ताकतें अपनी कौम को किधर ले जाएंगी? जब किश्ती ही डूब गई तो जिंदा बचना किसी का भी संभव नहीं। बुद्धिमत्ता इसी में है कि अनेकता में एकता को स्वीकार करते हुए जिओ और जीने दो की विचारधारा को अपना कर अपने कौमी अस्तित्त्व के साथ-साथ विशेष रूप से मानवीय अस्तित्त्व को बचाने के यत्न किये जाएँ। यह तभी संभव होगा जब हम कौमी संकीर्णता से ऊपर उठ कर गुरु साहिबान के मानवतावादी आदर्श 'एकु पिता एकस के हम बारिक और सभे साझीवाल सदाइनि' को जीवन में अपना कर सर्वसाझा भाईचारा सृजित करने के लिए प्रयत्नशील होंगे। आज विश्व भर में ज़रूरत है श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की रूहानी विचारधारा को अपनाने की। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रदर्शित मानवतावादी आदर्शों को अनुप्रयुक्त जीवन में अपनाने से ही 'न को बेरी नहीं बेगाना' का एहसास मानव को मानवतावादी बना कर विश्वव्यापी समस्याओं के हल के लिए प्रेरित करेगा।

- सतविंदर सिंघ फूलपुर
+९९१४४- १९४८४

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की मीरी-पीरी का सिद्धांत

*-डॉ. कशमीर सिंघ नूर**

मीरी-पीरी के मालिक, सिक्खों के छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का प्रकाश माता गंगा जी तथा पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी के गृह गांव गुरु की वडाली, जिला श्री अमृतसर साहिब में २१ आषाढ़, संवत् १६५२ को हुआ। इन्हें दल-भंजन योद्धा भी कहा जाता है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की शिक्षा-दीक्षा सिक्ख पंथ के महान विद्वान भाई गुरदास जी एवं बाबा बुड्ढा जी की देख-रेख में हुई। भाई गुरदास जी ने अपनी एक वार में गुरु जी की प्रशंसा इस प्रकार की है :

पंजि पिआले पंजि पीर
छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै
मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ
रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलि भंजन गुरु सूरमा
वड जोधा बहु परउपकारी। (वार १:४८)

उस समय की जालिम, अन्यायी, कट्टर और क्रूर सरकार के आदेश पर श्री गुरु अरजन देव जी को लगातार पांच दिन कई प्रकार की यातनाएं देने के बाद शहीद कर दिया गया। उन्होंने अपने उत्तराधिकारी के रूप में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का एलान किया। ११ वर्ष की आयु में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी गुरुआई पर विराजमान हुए।

सबसे पहले उन्होंने श्री हरिमंदर साहिब के बिलकुल सामने अकाल पुरख की सत्ता का प्रतीक एक तख्त बनाया। यह तख्त सिक्खों के सबसे पहले तख्त- श्री अकाल तख्त साहिब नाम से प्रसिद्ध है। उस समय की सरकार का हुक्म था कि कोई व्यक्ति तीन फुट से ऊंचा चबूतरा (थड़ा) नहीं बनवा सकता, सिर पर कलगी नहीं सजा सकता, बाज नहीं रख सकता, शिकार नहीं खेल सकता, शस्त्र धारण नहीं कर सकता, सेना नहीं रख सकता, घुड़सवारी नहीं कर सकता, निशान (झंडा) नहीं झुला (फहरा) सकता, वीर-रस की कविताओं का गायन नहीं कर या करवा सकता। अत्यंत पराक्रमी, दृढ़ निश्चयी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने सरकार के अन्यायी आदेशों को चुनौती देते हुए ये सब काम किए।

श्री अकाल तख्त साहिब पर छठे पातशाह एक सच्चे शहंशाह की तरह मीरी-पीरी, शस्त्र-शास्त्र धारण कर और सिर पर सुंदर कलगी सजा कर सुशोभित अर्थात् विराजमान हुए :

तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई।।
जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई।।

(पन्ना १०८८)

पहले पांच सिक्ख गुरुओं की भांति ही छठे गुरु जी ने सच-धर्म की स्थापि हेतु संघर्ष आरंभ कर दिया। सिक्ख सेवकों द्वारा भेंट किए गए घोड़े

**बी-एक्स-९२५, संतोखपुरा, हुशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०*

व शस्त्र स्वीकार किए। पहलवानों की कुश्ती के लिए अखाड़े बनवाए। सुडौल व निडर युवक शस्त्रबद्ध कर सेना भी बनाई। केवल स्वयं ही घुड़सवारी नहीं की बल्कि काबुल, कंधार तथा इराक से बढ़िया नस्ल के घोड़े मंगवाए और घुड़सवारों की फौज तैयार की। शिकारी कुत्ते व बाज रखे। शिकार खेला। 'तख्त' पर विराजमान होकर सबके साथ न्याय किया और मीरी को सही शब्दों में परिभाषित तथा रूपमान किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी व पीरी का सिद्धांत लागू करने के बाद स्वार्थी एवं लालची मसंदों को गुरु-घर से दूर कर दिया और गुरु एवं सिक्खों के बीच सीधा संपर्क स्थापित किया। उन्होंने पंजाब के अलावा कश्मीर, गुजरात, पीलीभीत, नानकमता साहिब, महाराष्ट्र आदि क्षेत्रों में भी सिक्ख धर्म, सच, न्याय, अच्छाई, रूहानियत का प्रचार किया और दिखा दिया कि वास्तव में पीरी बहुत अमीर व उच्च होती है। यह ऊंच-नीच, भेदभाव, अहंकार, द्वेष से मुक्त होती है। किसी विशेष किस्म का वेश धारण कर लेने से पीरी प्रकट नहीं होती है, अपितु दया, प्रेम, न्याय, आध्यात्मिकता, भक्ति को अपना कर ही इसे प्रकट किया जा सकता है। उन्होंने बता दिया कि पीरी आडंबर, पाखंड, दिखावे से रहित होती है। छठे पातशाह जी को पीरी के साथ-साथ मीरी के सिद्धांतों व आदर्शों को सुदृढ़ करने तथा इनका प्रचार करने हेतु कई प्रकार के विरोध का सामना भी करना पड़ा।

इतिहासकार मुहसन फानी अपनी पुस्तक 'दबिस्ताने-मज़ाहिब' में लिखता है– ''श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को कई मुसीबतों का सामना करना पड़ा। उन्होंने सिपाही का बाणा (वेश) धारण कर लिया। अपने पिता श्री गुरु अरजन देव जी के उसूलों को धारण करने के अलावा उन्होंने दो कृपाणें धारण कीं, फौज रखी और शिकार खेलना शुरू किया। उन्होंने गुरु-सिद्धांतों के विपरीत कोई बात न की, बल्कि पूर्व गुरुओं के पद्चिन्हों पर चलते हुए ही उत्कृष्ट कार्य किए। इंदू भूषण बैनर्जी का मत है कि श्री गुरु अरजन देव जी ने दिव्य दृष्टि से देख लिया था और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने अनुभव कर लिया था कि शस्त्रों के बिना सिक्ख समुदाय तथा संगठन (जत्थेबंदी) का बचना मुश्किल है।''

एक और इतिहासकार मैकालिफ बयान करता है-- ''श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने बाबा बुड्ढा जी को दो कृपाणें पहनाने के लिए कहा उनकी पगड़ी (दसतार) शाही शानो-शौकत वाली थी। बाबा बुड्ढा जी ने उन्हें दो कृपाणें पहनाईं- एक मीरी (राजनैतिक) और दूसरी पीरी (धार्मिक) संदर्भ में।''

प्रसिद्ध सिक्ख विद्वान, चिंतक तथा लेखक प्रिंसिपल सतिबीर सिंघ अपनी पुस्तक 'साडा इतिहास' में वर्णन करते हैं-- ''तख्तनशीनी के समय गुरु जी ने एकत्रित सिक्खों से कहा कि आज से मेरी प्यारी भेंट बढ़िया शस्त्र और बढ़िया जवानी होगी। मेरी खुशी (आशीष) लेनी है तो व्यायाम करो, कुश्ती करो, गतका खेलो, शिकार खेलने हेतु जंगलों में जाओ और घुड़सवारी भी करो! कमज़ोरी (भीरुता) दिखाना एक कौमी गुनाह है। इसे कदापि क्षमा नहीं किया जा सकता। तुम लोगों ने कृपाण इसलिए पकड़नी है, ताकि भविष्य में जालिमों की तलवारें चलनी बंद हो जाएं।''

''गुरु जी ने कुछ इस तरह के विचार भी अपने

सिक्खों के समक्ष रखे-- तुम सभी दूर-दूरस्थ स्थानों से यहां आए हो। तुम्हारी ही नहीं, मेरी ही नहीं, बल्कि सारे संसार की आत्मिक शांति छीन ली गई है। हम सभी आज से प्रण करते हैं कि हमारी कृपाणें चलती रहेंगी, जब तक संसार में से बाबरवाणी (क्रूरता) खत्म नहीं हो जाती।''

''अच्छी जवानी वही है, जो कौम के काम आ सके। मुझे पवित्र हृदयों और स्वच्छ मस्तिष्कों की जरूरत है। सच की खातिर मरना सीखें तभी जीवन सफल होगा! मृत्यु से कभी मत डरो! भय को अपने निकट न आने दो, तभी मंज़िल की प्राप्ति होगी! सिर ऊंचा कर चलना सीखोगे, तो सारा भय जाता रहेगा! वाहिगुरु पर भरोसा रखोगे तो सफलता अवश्य मिलेगी! भय को दूर भगाने से मौत भी संतुष्टि और प्रसन्नता भरी मिलती है। फिर कोई पछतावा बाकी नहीं रहता।''

''गुरु जी ने आगे फरमान किया-- तुम स्वयं को कम मत समझो! तुम सभी स्रोतों की भांति हो। सभी दरिया स्रोतों में से ही निकलते हैं। तुम्हारे जैसे लाखों स्रोत कौम में मौजूद हैं। जब तुम इकट्ठा होकर बहोगे यानी चलोगे, तब ऐसी बाढ़ आएगी, जो अन्याय, अत्याचार और अधर्म को बहा ले जाएगी। छोटी-सी दीयासलाई की तीली पूरे जंगल में आग लगा सकती है। तुम सभी तो फिर भी मानव हो! वे मानव, जिनका कलेजा तपती हुई तवियों पर जलाया गया है।''

''कवियों को संबोधित होते हुए उन्होंने फरमाया- देखिए, प्रभु ने तुम्हें कविता बख्शिश की है। तुम लोग कौम के निर्माण में ईंटों का पर्याय रहे हो। तुम अब लोगों को वो इतिहास सुनाओ, जो उन्हें प्रेरित व उत्साहित कर सके और वे कौमी परवानों की तरह धर्म की शमा पर जल सकें। लहू ठंडा (सर्द) न हो जाए, इसलिए शहीदों की कथाओं का ताप बढ़ा दो! यह पंजाब जाग उठे! अपनी कौम मज़बूती से अपने पैरों पर खड़ी हो सके!''

''ढाडियों से गुरु जी ने यूं फरमाया- अब तुम्हारे साज़ों में से ललकारे-जयकारे निकलने की जरूरत है! तुम्हारे स्वर क्रांति की तरंगें पैदा कर दें! तुम्हारी ढड्ड की थाप जनता को बाजू से पकड़ जगाए और तुम्हारे गज़ के घुंघरू कुबानी हेतु हृदयों में उमंग पैदा करें!''

श्री अकाल तख्त साहिब का गुंबद स्वाभिमान व गौरव का प्रतीक है और श्री हरिमंदर साहिब का गुंबद शांति, प्रेम, सद्भावना, नम्रता का प्रतीक है। मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का पावन विचार यही था कि राजनीति धर्म की निगहबान है। सत्ता के नशे में चूर शासक को धर्म अर्थात् अपना कर्त्तव्य भुला नहीं देना चाहिए। धर्म का सम्मान बेहद जरूरी है। मीरी और पीरी दोनों साथ-साथ निभाई कैसे जाती हैं, यह उन्होंने करके दिखा दिया था। कई लोग वेश तो मीरी का धारण कर लेते हैं तथा पीरी को भूल जाते हैं। वे दिखावा तो यही करते हैं कि उन्होंने पीरी को पूरी तरह से आत्मसात (धारण) कर लिया है, मगर उनके व्यवहार व कार्यों से उद्दंडता, अहंकार, लोभ-लालच की बुरी भावनाएं उजागर होती रहती हैं। मीरी-पीरी के मार्ग पर पूर्ण निष्ठा, निश्चय, साहस, सत्य, ईमानदारी के साथ ही चला जा सकता है।

अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी

*-डॉ. मनजीत कौर**

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का जन्म (प्रकाश) पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी तथा माता गंगा जी के घर २१ आषाढ़, संवत् १६५२ को गांव गुरु की वडाली, जिला श्री अमृतसर साहिब में हुआ। इस संदर्भ में इतिहासकार लिखते हैं कि माता गंगा जी एक बार बाबा बुड्ढा जी के लिए अपने हाथों से अत्यन्त श्रद्धा-भावना से मिस्से प्रशादे, मक्खन, लस्सी आदि तैयार कर बाबा बुड्ढा जी के पास जाती हैं। बाबा बुड्ढा जी उस समय खेत में हल चला रहे होते हैं। जैसे ही उन्हें खबर मिलती है कि माता गंगा जी आई हैं, वे तुरंत आकर बड़े प्यार से लंगर-प्रशाद छकते हैं। जैसे ही वे हाथों से प्याज फोड़ते हैं, तभी स्वाभाविक रूप से उनके मुखारबिंद से ये शब्द निकलते हैं-- ''माता जी! जैसे हमने यह प्याज फोड़ा है, आपके घर जन्म लेने वाला आपका सुपुत्र भी ऐसे ही वैरियों के सिर फोड़ेगा।''

बाल्य-काल : जन्म से ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के ताऊ प्रिथीचंद ने गुरु जी को नुकसान पहुंचाने के अनेक यत्न किए, लेकिन ईश्वर की अपार कृपा से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का कोई बाल भी बांका न कर सका। एक बार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को भयानक रूप से चेचक निकल आई। लोगों ने श्री गुरु अरजन देव जी को शीतला पूजने की सलाह दी, परंतु गुरु जी के वचन थे- ''जिसने कष्ट दिया है, वही (प्रभु) इसका निवारण भी करेगा। सभी भ्रम छोड़ कर प्रभु का सिमरन करना है और उचित उपचार करवाना है। ईश्वर-नाम की बरकत से समस्त दुख दूर हो जाते हैं।'' थोड़े दिन पश्चात् श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी पूर्णत: स्वस्थ हो गए। श्री गुरु अरजन देव जी ने अकाल पुरख का शुक्राना करते हुए शबद उच्चारण किया :

सदा सदा हरि जापे ।।
प्रभ बालक राखे आपे ।।
सीतला ठाकि रहाई ।।
बिघन गए हरि नाई ।। (पन्ना ६२७)

साथ ही वहम-भ्रम करने वाले के भ्रम दूर करने हेतु शबद उच्चारण किया :

नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव ।।
भरम गए पूरन भई सेव ।।१ ।। रहाउ ।।

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

सीतला ते रखिआ बिहारी ।।
पारब्रहम प्रभ किरपा धारी ।।१ ।।
नानक नामु जपै सो जीवै ।।
साधसंगि हरि अंम्रितु पीवै ।। (पन्ना २००)

वाहिगुरु की अपार कृपा से आप पूर्णत: स्वस्थ हो गए। आपको शिक्षा देने का पूर्ण प्रबंध किया गया। शिक्षा की सम्पूर्ण जिम्मेदारी भाई गुरदास जी को सौंपी गई। शस्त्र-अभ्यास, घुड़सवारी, नेजाबाजी आदि में पारंगत आप बाबा बुड्ढा जी की देख-रेख में हुए। आपका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली था।

गुरुआई : पिता श्री गुरु अरजन देव जी ने (शहादत हेतु) लाहौर जाने से पूर्व १६०६ ई. में बाबा बुड्ढा जी को आदेश दिया कि हमारे बाद गुरुआई पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को सुशोभित कर दिया जाए। उस समय आपकी आयु मात्र ग्यारह वर्ष थी।

मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण करना : पिता श्री गुरु अरजन देव जी की अपूर्व शहादत के परिणामस्वरूप सिक्ख इतिहास में एक क्रान्तिकारी मोड़ आया। इस सन्दर्भ में एक शायर ने कितना सटीक लिखा है :

शहीद की जो मौत है, वो कौम की हयात है।
हयात तो हयात है, मौत भी हयात है।

समय की नज़ाकत को बाखूबी समझते हुए और पिता श्री गुरु अरजन देव जी के आदेशानुसार आपने मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण करवाने हेतु बाबा बुड्ढा जी से आग्रह किया। इस प्रकार आपका व्यक्तित्व मीरी व पीरी, भक्ति व शक्ति, संत व सिपाही के गुणों से समन्वित हो गया। एक कृपाण आत्मिक मण्डल का नेतृत्व करने वाली तथा दूसरी सांसारिक विषयों को दिशा देने वाले प्रतीक रूप में सिद्ध हुई। इस संदर्भ में भाई अब्दुल्ला द्वारा गायन की गई वार उल्लेखनीय है :

दो तलवारां बद्धीआं,
इक मीरी दी, इक पीरी दी।
इक अजमत दी, इक राज दी,
इक राखी करे वजीरी दी।
हिम्मत बाहां कोट गढ़,
दरवाजा बलख बखीर दी।
नाल सिपाही नील नल,
मार दुसटां करे तगीर जी।
पग्ग तेरी, की जहांगीर दी ?

संतान : आपके गृह में पांच सुपुत्र- बाबा गुरदित्ता जी, बाबा सूरज मल्ल जी, बाबा अणी राय जी, बाबा अटल राय जी तथा श्री गुरु तेग बहादर जी और एक सुपुत्री- बीबी वीरो जी का जन्म हुआ।

सिक्खों में वीर रस का संचार : गुरुआई पर विराजमान होते ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने अपने सिक्खों को हुकमनामे भेजने शुरू किए, जिसमें आप जी द्वारा हिदायत की गई थी कि अब से गुरु-घर में भेंट-स्वरूप अस्त्र-

शस्त्र, घोड़े आदि भिजवाए जाएं। इसके अतिरिक्त श्री अमृतसर साहिब नगर के चारों ओर किलाबंदी भी करवाई गई।

श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने उस सर्वकला समर्थ अकाल पुरख का तख्त स्थापित किया जो सृष्टि का सृजनशील दातार पिता है और समस्त जीवों का प्रतिपालक तथा सर्वोच्च न्यायाधीश है। गुरबाणी आशयानुसार :

एको हुकमु वरतै सभ लोई ।।
एकसु ते सभ ओपति होई ।। *(पन्ना २२३)*

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की, जिसे सिक्ख इतिहास की एक महत्वपूर्ण कड़ी माना जाता है। आरंभ में इसे 'अकाल बुंगा' कहा जाता था। इसके निर्माण में गुरु जी के साथ भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी का विशेष सहयोग रहा। यह वो समय था जब समय के बादशाह जहांगीर का एलान था कि कोई अपना निजी स्थान अथवा मंच तीन फुट से ऊँचा नहीं बनवा सकता। इस घोषणा के बिलकुल विपरीत क्रान्तिकारी कदम उठाया श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने, जब उन्होंने श्री हरिमंदर साहिब के समक्ष १२ फुट ऊँचा तख्त स्थापित किया।

इस संदर्भ में 'नैतिक शिक्षा' पुस्तक के सम्पादक पिरथी सिंघ के विचार भी उल्लेखनीय हैं :-

''यह तख्त सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के बिलकुल सामने इसलिए बनाया गया कि वहां पर बैठा हुआ सिक्ख इन्सानी फर्ज न भूल जाए। सियासत धर्म की निगरानी में रहे। तख्त पर बैठा हुआ सिक्ख सियासी मद में धर्म ही न भूल जाए।''

इस प्रकार श्री अकाल तख्त साहिब सिक्ख पंथ को धर्मनीति और राजनीति से जोड़ने वाला एक सक्षम माध्यम है। गुरु साहिब स्वयं इस तख्त पर बैठ कर समस्त पंथक निर्णय लेते थे। वे सेवक-भाव में विचरण करते तथा राजनेता के रूप में कार्यशील हो सैन्य-शक्ति का निरीक्षण करते, राजनीति से सम्बन्धित समस्त हुकमनामे और आदेश जारी करते। इन्हीं हुकमनामों की बदौलत सिक्ख पंथ के गौरवशाली इतिहास की सृजना हुई।

यहां पर झूलते-लहराते दो केसरी निशान साहिब सिक्ख पंथ की आध्यात्मिक शक्ति और राजनीतिक-शक्ति अर्थात् पीरी और मीरी के प्रतीक एवं सजग प्रहरी हैं।

बंदी-छोड़ दाता : समय के बादशाह जहांगीर को गुरु-घर की ताकत एवं रुतबा खटकने लगा था। यहीं नहीं, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की बहादुरी, आध्यात्मिक शक्ति, राजनीतिक शक्ति तथा फौज की तैयारी से वह बुरी तरह से भयभीत था। कपटपूर्वक उसने श्री

गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को ग्वालियर के किले में कैद करवा दिया। ५२ हिंदू राजा पहले से ही इस किले में नजरबंद थे। गुरु जी को नजरबंद करते ही जहांगीर भयानक रोग से ग्रसित हो गया। उसका दिन का चैन और रातों की नींद उड़ चुकी थी। इस दौरान सूफी संत साँई मियां मीर जी, जो कि गुरु-घर के अनन्य श्रद्धालु थे, के वचनों ने जहांगीर को अंदर तक झकझोर दिया। उनके वचन थे- ''जहांगीर, तू बड़ा गुनहगार है। खुदा तुझे कभी माफ नहीं करेगा।'' यह सुनकर जहांगीर घबरा गया और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को दिल्ली आकर दर्शन देने हेतु विनती की। इस पर गुरु जी का जवाब था कि जब तक इन ५२ राजाओं को मुक्त नहीं करोगे, तब तक हम भी यहीं पर रहेंगे।

लम्बे विचार-विमर्श के बाद जहांगीर ने कहा, जितने राजा आपका चोला (चोगा) पकड़ कर बाहर आ सकेंगे, उन्हें मुक्त कर दिया जाएगा। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने ५२ कलियों वाला चोला सिलवाया। समस्त ५२ राजा एक-एक कली पकड़ कर किले से बाहर आ गए। तब से आपको 'बंदी-छोड़ दाता' कहा जाने लगा।

चार धर्म-युद्ध : जहांगीर की मृत्यु के उपरान्त शाहजहां सिंहासन पर बैठा। उसका व्यवहार सिक्खों के प्रति और भी कठोर था। उसने चार बार गुरु जी पर हमलावर बना कर अपने जरनैल व फौज भेजी। बदी की ताकतों को कुचलने हेतु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने उनका सामना करते हुए चार धर्म-युद्ध लड़े और चारों में विजय हासिल की। गुरु जी का उद्देश्य कोई अपना राज्य स्थापित करना नहीं था, अपितु ये युद्ध जुल्म और अन्याय के विरुद्ध थे।

धर्म-प्रचार एवं धार्मिक स्थानों का निर्माण : युद्धों के उपरान्त आपने श्री कीरतपुर साहिब में जा निवास किया तथा फिर धर्म-प्रचार हेतु कश्मीर पीलीभीत, मालवा आदि स्थानों पर गए, जहां लाखों हिंदू और मुसलमान भी गुरु-घर के साथ जुड़ गए। आपके द्वारा श्री अमृतसर साहिब में श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की गई। कौलसर, डेरा साहिब लाहौर, कीरतपुर साहिब, महिराज, बिबेकसर, श्री हरिगोबिंदपुर आदि का निर्माण अथवा स्थापन आप जी ने करवाया।

ज्योति-जोत समाना : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने अपने पोते श्री गुरु हरिराय साहिब जी को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हुए उन्हें सप्तम गुरु के रूप में सुशोभित किया। बाबा बुड्ढा जी के सुपुत्र भाई भाना जी ने गुरुआई की रसम अदा की तथा १६४४ ई. में आप कीरतपुर साहिब में परम ज्योति में विलीन हो गए।

भक्त कबीर जी की बाणी में विचारधाराई तत्व

-डॉ. राजेन्द्र सिंघ साहिल*

जिन महान् भक्तों-विचारकों की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है, उनमें से भक्त कबीर जी का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में १६ रागों में भक्त कबीर जी के कुल ५३७ शबद एवं सलोक संकलित हैं।

सन् १६०४ ई. में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संपादन के बाद से यह समस्त बाणी शुद्ध एवं प्रमाणिक रूप में चली आ रही है, जिसमें कोई प्रक्षिप्त शामिल होने की ज़रा-सी भी संभावना नहीं रही है। परंपरा के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी उदासियों के दौरान समस्त भक्त-बाणी एकत्र की थी, जो परवर्ती गुरु साहिबान से होती हुई पंचम पातशाह को प्राप्त हुई।

मूलभूत विचारधाराई तत्व : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त कबीर जी बाणी में भक्त कबीर जी के मूलभूत विचारधाराई तत्व अपने संपूर्ण रूप में मिलते हैं। इसका कारण है कि भक्त कबीर जी की वैचारिकता और गुरमति दर्शन के आधारभूत सिद्धांतों में अद्‌भुत समानता है। ब्रह्म का निराकार स्वरूप, आत्मा-परमात्मा में अभिन्नता सृष्टि एवं माया की स्थिति, मानसिक भक्ति, नाम-सिमरन, गुरु का महत्व, धर्म और समाज-सुधार, विश्व-बंधुत्व जैसे समस्त सैद्धांतिक बिंदु श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित भक्त कबीर जी की बाणी में पूर्ण प्रखरता के साथ उपस्थित हैं।

१) ब्रह्म का निराकार स्वरूप

संकटि नही परै जोनि नही आवै
नामु निरंजन जा को रे ।।
कबीर को सुआमी ऐसो ठाकुर
जा कै माई न बापो रे॥ *(पन्ना ३३९)*

२) आत्मा-परमात्मा में अभिन्नता

कहु कबीर इहु राम की अंसु॥ *(पन्ना ८७१)*

३) सृष्टि एवं माया

नाकहु काटी कानहु काटी
काटि कूटि कै डारी॥
कहु कबीर संतन की बैरनि
तीनि लोक की पिआरी॥ *(पन्ना ४७६)*

४) नाम-सिमरन

कबीर तूं तूं करता तू हूआ
मुझ महि रहा न हूं॥
जब आपा पर का मिटि गइआ
जत देखउ तत तू॥ *(पन्ना १३७५)*

५) गुरु का महत्व

सतिगुर मिले त मारगु दिखाइआ॥
जगत पिता मेरै मनि भाइआ॥ *(पन्ना ४७६)*

६) धर्म और समाज-सुधार

बुत पूजि पूजि हिंदू मूए
तुरक मूए सिरु नाई॥
ओइ ले जारे ओइ ले गाडे
तेरी गति दुहू न पाई॥ *(पन्ना ६५४)*

७) विश्व बंधुत्व-जाति-व्यवस्था का विरोध

अवलि अलह नूरु उपाइआ
कुदरति के सभ बंदे॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ
कउन भले को मंदे॥ *(पन्ना १३४९)*

ये सभी भक्त कबीर जी की बाणी में से प्रस्तुत किए गए कुछ अंश-मात्र हैं। वास्तव में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल भक्त कबीर जी की बाणी प्रचुर

*१/३३८, स्वप्नलोक, दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना, फोन : ६२३९६-०१६४१

मात्रा में है और उसकी प्रत्येक पंक्ति अपने-आप में एक-एक सिद्धांत है।

भक्त कबीर जी की बाणी के विलक्षण सिद्धांत : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त कबीर जी की बाणी में कुछ ऐसे विचार भी प्राप्त होते हैं जिन्हें भक्त कबीर जी के व्यक्तित्व के साथ बहुत कम जोड़ा जाता है, परंतु वे सिक्ख धर्म के मूल सिद्धान्तों में से हैं। ज़रा इन पर भी दृष्टिपात करें :-

१) लोक-संघर्ष का आह्वान

गगन दमामा बाजिओ
परिओ नीसानै घाउ ॥
खेतु जु मांडिओ सूरमा
अब जूझन को दाउ ॥१ ॥
सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

२) आर्थिक समृद्धि की अनिवार्यता

गुरमति दर्शन में वैराग्य को स्थान नहीं मिला है। यह सांसारिक गृहस्थियों का मत है। यहाँ ''सकल धरम मै ग्रिहसतु प्रधान है'' कह कर गृहस्थी को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्रदान किया गया है। गुरमति विचारधारा के अनुसार मनुष्य को अपने हाथों से आजीविका अर्जित करके अपने परिवार का पालन-पोषण करना चाहिए। अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना गुरमति में अत्यंत श्रेष्ठ माना गया है। गुरमति के एक सिद्धांत 'देग तेग फ़तह' में देग (भोजन का बरतन) की फ़तह पहले है, तेग (कृपाण) की फ़तह बाद में।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त कबीर जी का एक ऐसा पद भी संकलित है जिसमें भक्त जी प्रभु से खुशहाल जीवन जीने के लिए ज़रूरी सारी वस्तुएँ मांग रहे हैं और कहते हैं कि मुझसे भूखे रह कर तुम्हारी भक्ति नहीं होती। और साथ ही यह भी कहते हैं कि ये सारी चीजें मांग कर मैं कोई लोभ नहीं कर रहा। यह सब मेरे पास होगा, तभी तुम्हारा नाम मेरे मुख से फबेगा :

भूखे भगति न कीजै ॥
यह माला अपनी लीजै ॥
हउ मांगउ संतन रेना ।
मै नाही किसी का देना ॥१ ॥
माधो कैसी बनै तुम संगे ॥ रहाउ ॥
आपि न देहु त लेवउ मंगे ॥
दुइ सेर मांगउ चूना ॥
पाउ घीउ संगि लूना ॥
अध सेरु मांगउ दाले ॥
मो कउ दोनउ वखत जिवाले ॥२ ॥
खाट मांगउ चउपाई ॥
सिरहाना अवर तुलाई ॥
ऊपर कउ मांगउ खींधा ॥
तेरी भगति करै जनु थींधा ॥३ ॥
मै नाही कीता लबो ॥
इकु नाउ तेरा मै फबो ॥
कहि कबीर मनु मानिआ ॥
मनु मानिआ तउ हरि जानिआ ॥ *(पन्ना ६५६)*

भक्त कबीर जी ईश्वर से स्पष्ट कह रहे हैं कि अगर तूमने मुझे भूखा रखना है तो मुझसे तुम्हारी भक्ति नहीं होगी। मुझे इतनी संपत्ति दो कि मैं किसी का मोहताज न रहूँ। मुझे दो सेर आटा, पाव भर घी, आधा सेर दाल, नमक दो, ताकि मेरी दो वक्त की रोटी चल सके। इसके अलावा मुझे चारपाई, सिरहाना और तलाई भी चाहिए। ये सब मांग कर मैं लालच नहीं कर रहा, इनके बिना गुजारा नहीं होता।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब मध्यकालीन भक्तों की प्रमाणिक बाणी का एक विराट संग्रह है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त कबीर जी की बाणी इस तथ्य की द्योतक है कि भक्त कबीर जी की विचारधारा और गुरमति-दर्शन में अत्यंत समानता है, इसीलिए अपनी उदासियों के समय श्री गुरु नानक देव जी ने भक्त कबीर जी की बाणी संरक्षित की।

माधो दास से बाबा बंदा सिंघ बहादुर
(भट्ट वहियों के विशेष हवाले से)

*-डॉ. तेजिंदर पाल सिंघ**

सिक्ख इतिहास में बाबा बंदा सिंघ बहादुर का नाम बड़े गौरव के साथ लिया जाता है। उनके जीवन और शख्सियत से सम्बन्धित चाहे इतिहासकारों ने बहुत कुछ लिखा है, परंतु फिर भी समूह उपलब्ध सामग्री प्रमाणिक नहीं मानी जा सकती। इस संदर्भ में भट्ट वहियों (बही, बहियाँ) इतिहास का एक ऐसा कीमती स्रोत हैं, जिनमें बाबा बंदा सिंघ बहादुर से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध है, जो इतिहासकारों द्वारा एक लंबे अरसे तक अनदेखी की गई। बेशक १७वीं सदी के ऐतिहासिक ग्रंथों ने बाबा बंदा सिंघ बहादुर के बारे में बाखूबी वर्णन किया है, परंतु इस संदर्भ में भट्ट वहियों की अपनी विशेष भूमिका है।

इस लेख में भट्ट वहियों के हवाले से माधो दास से बाबा बंदा सिंघ बहादुर तक के सफ़र के बारे में जानकारी मुहैया करवाई जा रही है। लेख में ज्ञानी गरजा सिंघ[१] (१९०४- १९७७) द्वारा भट्ट वहियों से लिए गए नोट्स ही इस्तेमाल किए गए हैं[२], मूल भट्ट वहियों तक हमारी पहुँच नहीं हो सकी। भट्ट वहियों के अलावा पुष्टि के लिए 'गुरू कीआं साखियां'[३] में से भी हवाले अंकित किए हैं।

वर्णनीय है कि ज्ञानी गरजा सिंघ ने बड़ी मेहनत के साथ भट्ट वहियों तक पहुँच करके, इनका अध्ययन करने के पश्चात् कुछ नोट्स लिए थे, जो पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला के मुख्य पुस्तकालय में डॉ. गंडा सिंघ रेफ्रेंस सेक्शन और पंजाब हिस्टोरिकल स्ट्डीज में सुरक्षित हैं। वास्तव में अठारहवीं सदी के अंतिम दशक के दौरान भाई छज्जू सिंघ भट्ट ने गुरु साहिबान से संबंधित उपलब्ध साखियों का गुरमुखी में लिप्यंतरण किया था। कुछ समय पश्चात् ज्ञानी गरजा सिंघ ने इसकी प्रतिलिपि की नकल कर इस अमूल्य खजाने को सिक्ख पंथ की झोली में डाला। खेद की बात यह है कि मौजूदा समय तक इस मूल्यवान दस्तावेज़ को किसी भी विद्वान ने संपादित नहीं किया, जिस कारण इस खजाने से आवश्यक लाभ नहीं लिया गया। बाबा बंदा सिंघ बहादुर के बारे में जानकारी देने से पहले भट्ट वहियों के सम्बंध में संक्षिप्त जान-पहचान

**सहायक प्रोफेसर (धर्म अध्ययन), यूनिवर्सिटी कॉलेज, मीरांपुर, जिला पटियाला, फोन : ९९८८०-०४७३३*

करनी सारर्थक सिद्ध होगी।

'भट्ट' संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है-- महिमा गायन करने वाला कवि अथवा राज दरबार में राजा और योद्धाओं का यश गायन करने वाला।[४] भट्ट, अक्सर राज दरबारों में रहते थे और युद्धों में राजाओं द्वारा प्राप्त की विजय की वीर-गाथाएं, उनकी अगली पीढ़ी और प्रजा को सुनाते थे। भट्टों की पृष्टभूमि देखने पर पता चलता है कि श्री गुरु अमरदास जी के समय भिखा नामक भट्ट ने सिक्खी धारण की। उपरांत श्री गुरु अरजन देव जी के समय वह अपने साथ कई अन्य भट्टों को लेकर गुरु-दरबार में उपस्थित हुआ। उन भट्टों ने गुरु साहिबान की उपमा में जो छंद उच्चारण किए, वे श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं।[५] यहाँ पर यह स्पष्ट करना उचित होगा कि भट्ट वहियों वाले भट्ट तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी वाले भट्ट एक नहीं हैं।

भट्ट, यजमानों के ख़ुशी-ग़मी के अवसर पर उपस्थित होकर बधाई देकर अपनी दान-दक्षिणा लेते थे। यह उनका रोज़गार का साधन भी था। इसी कारण भट्ट लोग अपने पास वहियां[६] रखते थे और जहाँ कहीं वे जाते थे, यजमानों के नाम, पते और वंशावालियां साथ ही साथ दर्ज करते रहते थे। यदि कोई ख़ास घटना घटित होती, वे उसका विवरण भी दर्ज कर लेते। इसका लाभ यह होता कि जब कोई यजमानों का विशेष समारोह होता तो ये पिछले कुर्सीनामे और कारनामे पढ़-सुना कर, पूर्वजों की ख़ास वीरता पर दान देने की प्रकट बातें बता कर, नयी पीढ़ी के मन में प्रसन्नता पैदा कर देते, जिस कारण उन्हें अच्छा-खासा दान या बख्शिश प्राप्त होती थी।

ये वहियां भट्टों के जीवन का आधार थीं, इसलिए इनका संरक्षण किया जाता था, क्योंकि इनमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी अनेक घरानों के प्रमुख हालात लिखे जाते थे। वर्णनयोग्य है कि ये भट्ट, कोई विद्वान या इतिहासकार नहीं थे और न ही इतिहास लिखना इनका उद्देश्य था, ये तो केवल रोज़गार की ख़ातिर अपने यजमान-ख़ानदान की उपमा-गायन की घटनावली अंकित किया करते थे, ताकि उचित समय पर सुनाने के लिए आवश्यक सामग्री तैयार रहे।

भट्ट अकेले नहीं, बल्कि समूह के रूप में विचरण किया करते थे। इन्होंने अपने-अपने क्षेत्र भी बाँटे हुए थे और अपने क्षेत्र के यजमानों से ही दान-दक्षिणा लेने जाते थे। इसी कारण इन वहियों के नाम क्षेत्र, ख़ानदान या गाँव के नाम पर हैं, जैसे कि भट्ट वही मुलतानी सिंधी, भट्ट वही तलउंढा, भट्ट वही करसिंधू, भट्ट वही भादसों, भट्ट वही पूरबी दक्षिणी, भट्ट वही जादो बंसियाँ की आदि।

भट्ट वहियों में जहाँ राजाओं के कौशल का वर्णन मिलता है, वहीं इन वहियों का सिक्ख इतिहास के साथ भी गहरा सम्बन्ध है। उपरोक्त वर्णन के बताए अनुसार भट्टों का सिक्खी में आगमन तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी के समय हुआ। उस समय से लेकर अठारहवीं सदी तक के प्रभावशाली सिक्खों का इतिहास इन वहियों में मौजूद है। ये भट्ट वहियां 'भट्ट-अछरी' लिपि में लिखी जाती थीं। सिक्ख इतिहास के महान नायक बाबा बंदा सिंघ बहादुर के श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ मिलाप के सम्बंध में व भट्ट वहियों में प्राप्त सामग्री निम्नलिखित के अनुसार है :-

भट्ट वहियों के अनुसार संवत् १७६५ (१७०८ ई.) में तीज के दिन सूर्य-ग्रहण पर लगे मेले के अवसर पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने साथी सिंघों सहित माधो दास वैरागी के डेरे पर गए। उस समय माधो दास अपने डेरे में मौजूद नहीं था। डेरे में स्थित माधो दास के पलंग पर गुरु साहिब ने अपना आसन लगाया और माधो दास का इन्तज़ार करने लगे।

यह सारी दास्तान माधो दास के शिष्यों ने जब जाकर उसे सुनाई तो वह क्रोधित हो उठा। उसने डेरे में जाकर अपनी शक्ति द्वारा पलंग को पलटाना चाहा, परंतु पलंग स्थिर रहा। यह देख कर माधो दास गुरु साहिब के चरणों पर गिर गया और उसने अपने आप को गुरु साहिब का बंदा (शिष्य) स्वीकार किया। आगे से गुरु साहिब ने 'बंदे' को खड़ा कर अपने सीने से लगाया और डेरे के अंदर ले गए। अगले दिन गुरु साहिब ने 'बंदे' को 'खंडे' की पाहुल देकर 'खालसा' बना दिया। यह सारी दास्तान भट्ट वही में इस प्रकार अंकित है :-

''गुरु गोबिंद सिंघ जी महल दसमां... संमत सतरां सै पैंसठ कार्तिक प्रविष्टे तीज सुकरवार के दिहु नदेड़ गाउं में सूरज ग्रहिन के मेले ते गोदावरी नदी के तीर जानकी प्रसादि के चेले माधो दास के डेरे में आइ गए। माधो दास बैरागी डेरे में हाजर न था। गुरु जी ने उस के पलंघ ते आसन लगा लिया। . . . माधो दास चेलों से डेरे की सारी बारता सुन आग भगोला होइ डेरे में आया। इसे जगा अभ्यास के बल से पलंघ उठवाना चाहा। पलंघ समेर परबत की तर्हां अचल्ल होइ गया। आखर माधो दास गुरु जी के पाउ पकड़ आइ के बोला, मुझे राख लेना मैं आप के दर का बंदा हां।। सतिगुरां इसे बाजू से पकड़ आपणे सीने नाल लाया। इसे गैल लै आपने डेरे में आइ गए। अगले दिवस इस के अर जोई पान खांडे की पाहुल दे के खालसा बना दिया।''[७]

उक्त दास्तान भाई स्वरूप सिंघ कौशिश ने बड़े विस्तार सहित बयान की है।[८] इस सम्बंध

में 'अमरनामा'[९] में भी विस्तृत जानकारी मिलती है। इसके कर्ता के अनुसार, बाबा बंदा सिंघ बहादुर को जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आगमन के बारे में पता चला तो उसने आकर अपनी शक्तियों के द्वारा गुरु साहिब को मात देनी चाही, परंतु करामातें न चलती देखकर बाबा बंदा सिंघ गुरु साहिब के चरणों पर गिर पड़ा :

. . . कदम बोसीए मन दरां दम शुदा।
तलबगारे लुतफो त्रहुम शुदा।[१०]

अर्थात् उस समय 'बंदा' मेरे (श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के) चरणों पर गिर पड़ा और क्षमा-याचना करने लगा।[११]

बाबा बंदा सिंघ बहादुर को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा खंडे की पाहुल देने से सम्बन्धित वर्णन की एक अन्य वही भी पुष्टि करती है। इसके अनुसार संवत् १७६५ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादुर को अपने मुबारक हाथों से पाहुल देकर उनका नाम 'बंदा सिंघ' रखा। तत्पश्चात् 'बंदा सिंघ' को रहित दृढ़ करवाई :

''गुरू गोबिंद सिंघ महल दसमा, बेटा गुरू तेग बहादर जी का संमत सतरां सै पैंसठ असुव दिहुं चार गए, गाम नदेड़ देस दक्खण में गुरु जी ने दैआ सिंघ से कहा- माधो दास शस्त्र-बस्त्र सजाय हाथ में नेजा पकड़ि गुरू जी के साहवें आइ खला हुआ। सतिगुरां इसे अपने दसति मुबारक से पाहुल दी, बंदा सिंघ नाउं राखा। इसे रहत बहत बताई।''[१२]

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने हस्त-कमलों द्वारा माधो दास को पाँच ककार सजा कर, खंडे की पाहुल देने के पश्चात् उसे 'वैरागी से सिंघ' बना दिया। इतिहास इस बात की गवाही देता है कि माधो दास को 'बंदा सिंघ' बनाने के उपरांत गुरु साहिब ने उसे पंथ की बागडोर देकर पाँच अन्य सिंघों- भगवंत सिंघ, कुइर सिंघ, बाज सिंघ, बिनोद सिंघ और काहन सिंघ* सहित पंजाब की धरती पर जाकर पापियों को सुधारने का हुक्म किया, जिसे मानते हुए बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने पंजाब की ओर प्रस्थान किया। इस सम्बंध में भट्ट वहियां इस प्रकार गवाही भरती हैं :-

''भगवंत सिंघ नठिया का कउर सिंघ नठिया का बाज सिंघ नठिया का पोते बल्लू के पड़पोते मूले के बंस जल्ले का . . . बासी खेरपुर प्रगनां सीतपुर बंगेसरी। बनोद सिंघ गोबिंद राम का काहन सिंघ बिनोद सिंघ का पोता गोबिंद राम का, पड़पोता जगत मल्ल का, बंस गुरू अंगद जी की, गुरु जी का बचन पाइ संमत १७६५ कारतक मासे शुक्ला पखे तीज

**डॉ. गंडा सिंघ ने पाँच सिंघों के नाम— भाई बिनोद सिंघ, भाई काहन सिंघ, भाई दया सिंघ, भाई रण सिंघ तथा भाई बाज सिंघ लिखे हैं।*

मंगलवार के दिहु पांच घरी दिवस चढे बंदा सिंघ की गैल नायक भगवंत सिंघ के टांडा में पांच सिक्ख दखन देस-नदेर नगरी में पंजाब तरफ आए।''[१३]

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ हुई भेंट के पश्चात् गुरु साहिब द्वारा बाबा बंदा सिंघ बहादुर को पंजाब भेजने आदि के सम्बंध में भट्ट वहियाँ बाखूबी पेशकारी करती हैं। पंजाब जाने के बाद बाबा बंदा सिंघ बहादुर की विजय-प्राप्ति आदि के बारे में भट्ट वहियों में से कोई ख़ास सूचना प्राप्त नहीं होती। बाबा बंदा सिंघ बहादुर और उनके साथ आए पाँच सिंघों की शहादत के बारे भट्ट वहियाँ गवाही अवश्य भरती हैं। भट्ट वही के अनुसार बाबा बंदा सिंघ को उनके पाँच साथी सिंघों सहित संवत् १७७३ (१७१६ ई.) के आषाढ़ माह में शहीद कर दिया गया।

भट्ट वहियों में से बाबा बंदा सिंघ बहादुर के परिवार के बारे में भी सूचना मिलती है, जो कि ऐतिहासिक दृष्टि से अति लाभदायक है। भट्ट वहियों के अनुसार बाबा बंदा सिंघ बहादुर के दो पुत्र थे— रणजीत सिंघ और अजै सिंघ। अजै सिंघ चार वर्ष की आयु में ही अपने पिता बाबा बंदा सिंघ बहादुर के साथ शहीद हो गया। रणजीत सिंघ की संतान दो पुत्र थे— जुझार सिंघ और जोरावर सिंघ। जोरावर सिंघ की संतान— अरजन सिंघ; अरजन सिंघ की संतान— खड़क सिंघ; खड़क सिंघ की संतान— दया सिंघ; दया सिंघ की संतान- सुजान सिंघ; सुजान सिंघ की संतान— सरदूल सिंघ और सरदूल सिंघ की संतान— तेजिंदर सिंघ।[१४] बाबा जी के इस परिवार की गवाही भट्ट वहियाँ इस प्रकार बयान करती हैं :—

''भाई फतहि सिंघ सुचेत सिंघ बेटे साहिब सिंघ जुझार सिंघ जी के पोते रणजीत सिंघ के पड़पोते साहिब बंदा साहिब जी के बंस गुरू गोबिंद सिंघ जी का संमत् १८८० में पिता साहिब जुझार सिंघ जी के फूल लिआए गंगा जी।''[१५]

भट्ट वहियाँ जहाँ बाबा बंदा सिंघ बहादुर की अहम घटनाएँ पेश करती हैं, वही इनके माध्यम से बाबा बंदा सिंघ बहादुर से सम्बन्धित कई ऐतिहासिक नामों/ स्थानों के विवरण भी सामने आते हैं, जो इस प्रकार हैं :-

१. भाई सुचेत सिंघ— भाई जुझार सिंघ का बेटा, बाबा बंदा सिंघ बहादुर का पड़पोता

२. भाई कउर सिंघ— बाबा बंदा सिंघ बहादुर का साथी शहीद

३. भाई काहन सिंघ— भाई बिनोद सिंघ का पोता और भाई गोबिंद राम का परपोता

४. बीबी किशन देई— भाई फतिह सिंघ के परिवार में से एक स्त्री

५. बीबी गुलाब देई— भाई फतिह सिंघ के परिवार में से एक स्त्री

६. भाई गोबिंद राम— भाई बिनोद सिंघ का पिता व काहन सिंघ का परदादा

७. बीबी गंगा जी– बाबा बंदा सिंघ बहादुर के वंश में से एक स्त्री

८. भाई जगत मल्ल— भाई बिनोद सिंघ और भाई गोबिंद राम का पूर्वज

९. भाई जानकी दास– बाबा बंदा सिंघ अथवा माधो दास का गुरु (उस्ताद)

१०. भाई जुझार सिंघ— भाई रणजीत सिंघ का पुत्र, बाबा बंदा सिंघ बहादुर का पोता

११. भाई जल्ला— भाई बल्लू और भाई मूले का पूर्वज

१२. बीबी दौरां— बीबी गंगा की सेवादारनी

१३. बीबी नारायण देई— बाबा बंदा सिंघ बहादुर के वंश में से एक स्त्री

१४. भाई फतहि सिंघ— भाई जुझार सिंघ का पुत्र, भाई रणजीत सिंघ का पोता, बाबा जी का परपोता

१५. भाई बाज सिंघ— बाबा बंदा सिंघ बहादुर का साथी शहीद

१६. भाई बिनोद सिंघ— भाई गोबिंद राम का पुत्र और भाई काहन सिंघ का दादा

१७. भाई बल्लू— भाई भगवंत सिंघ, भाई कउर सिंघ और भाई बाज सिंघ का दादा

१८. भाई भगवंत सिंघ— बाबा बंदा सिंघ बहादुर का साथी शहीद

१९. भाई देआ सिंघ— पाँच प्यारों में से एक सिंघ

२०. बीबी भागभरी— बाबा बंदा सिंघ बहादुर के वंश में से एक स्त्री

२१. बीबी मलावी— बीबी गंगा की सेवादारनी

२२. भाई माधो दास— बाबा बंदा सिंघ बहादुर का पहला नाम

२३. भाई मूला— भाई भगवंत सिंघ, भाई कउर सिंघ और भाई बाज सिंघ का परदादा

२४. भाई रणजीत सिंघ— बाबा जी का पुत्र, भाई जुझार सिंघ का पिता फतहि सिंघ और भाई सुचेत सिंघ का दादा

२५. बीबी रामदेई— बीबी गंगा की सेवादारनी

२६. बीबी प्रेमी– बीबी गंगा की सेवादारनी

भट्ट वहियों में बाबा बंदा सिंघ बहादुर से सम्बन्धित २६ ऐतिहासिक नामों की सूची के अलावा पाँच ऐतिहासिक स्थानों का ज़िक्र भी आता है। ये स्थान हैं– सीडपुर बंगेसरी, नांदेड़, खेरपुर प्रगनां, मदर देश (पंजाब) और टांडा।

सारांशतः कहा जा सकता है कि बाबा बंदा सिंघ बहादुर के माध्यम से भट्ट वहियों के साथ जान-पहचान करवाने का यह एक यत्न-मात्र था। ऐतिहासिक तथ्यों को गंभीरता के साथ

देखने के लिए यह ज़रूरी है कि अज्ञात ऐतिहासिक ग्रंथों का अध्ययन किया जाए। इस संदर्भ में 'भट्ट वहियाँ' अति बहुमूल्य ख़ज़ाना हैं, जिनकी वैज्ञानिक खोज के माध्यम से अनेक ऐसी महत्वपूर्ण घटनाओं का खुलासा किया जा सकता है, जिनके बारे में कोई अन्य ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता। संक्षिप्त में विचार करे तो भट्ट वहियों में बाबा बंदा सिंघ बहादुर के बारे में पाँच तथ्य दृष्टिगोचर होते हैं– बाबा बंदा सिंघ बहादुर की श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ भेंट; माधो दास तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी; माधो दास का श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से अमृत छकना; श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा बाबा बंदा सिंघ बहादुर को पंथ का जत्थेदार नियुक्त करना और बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत।

हवाले और टिप्पणियाँ :

१. ज्ञानी गरजा सिंघ सिक्ख अकादमिकता को पूर्णत: समर्पित थे, जिन्होंने अपना समूचा जीवन सिक्ख इतिहास के अज्ञात ऐतिहासिक ग्रंथों के संरक्षण में व्यतीत हुआ। वे शायद पहले इतिहासकार थे, जो सिक्ख इतिहास के कुछ प्रमुख तथ्यों को सामने लेकर आए। इसके बावजूद वे ख़ुद भी अपरिचित ही रहे। एक अरसे के बाद उनकी रचनाओं को इतिहासकारों ने प्रमाण के तौर पर इस्तेमाल करना शुरू किया।

२. मूल रूप में ये नोट्स टाइप रूप में उपलब्ध हैं।

३. ऐतिहासक दृष्टि से 'गुरू कीआं साखियां' बहुत महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ है, क्योंकि ये समकालीन लिखतें– भट्ट वहियों के आधार पर तैयार की गई है। अठारहवीं सदी के अंत, सिक्ख मिसलों के समय गाँव भादसों (परगना थानेसर) के निवासी भाई केसर सिंघ भट्ट के दो पुत्र थे– भाई स्वरूप सिंघ और भाई सेवा सिंघ। भाई स्वरूप सिंघ ने अपने पूर्वजों के खजाने (भट्ट वहियों) का अध्ययन कर गुरु साहिबान के सम्बंध में प्राप्त साखियों के आधार पर १७९० ई. में पंजाबी भाषा में 'गुरू कीआं साखियां' पुस्तक तैयार की, जो बाद में पिआरा सिंघ पद्म ने संपादित की।

४. भाई कान्ह सिंघ नाभा, महान कोश, भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला, १९९९ (छठम संस्करण), पृष्ठ ९०४.

५. श्री गुरु ग्रंथ साहिब, १३८५- १४०९.

६. 'वही' शब्द 'बही' का समानार्थी है, जिसका अर्थ है– हिसाब की किताब, महान कोश, पृष्ठ ८२८। गुरबाणी में भी 'वही' शब्द इन्ही अर्थों में आया है–'' लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही॥'' श्री गुरु ग्रंथ साहिब, ९५३.

७. भट्ट वही पूरबी–दक्षिणी

८. पिआरा सिंघ पद्म (सम्पा.), गुरू कीआं साखियां, सिंघ ब्रादर्स, श्री अमृतसर, १९९९ (चतुर्थ संस्करण) पृष्ठ ९७–९८.

९. अमरनामा सिक्ख इतिहास का बहुमूल्य स्रोत है। मूल रूप से यह फ़ारसी भाषा में लिखा गया था। इसके कुल १४६ बैत हैं। यह रचना श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के दरबारी ढाडी भाई नत्था मल्ल की है। यह दस्तावेज़ ढाडी भाई नत्था मल्ल के वंशज भाई फत्ता से प्राप्त हुआ। भाई फत्ता की गवाही के अनुसार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के अंतिम समय ढाडी भाई नत्था मल्ल उनके पास उपस्थित था। इसकी प्राप्ति से कुछ समय बाद डॉ. गंडा सिंघ ने इसका पंजाबी में अनुवाद किया। पहली बार इसकी प्रकाशना सिक्ख हिस्ट्री सोसायटी, श्री अमृतसर ने १९५३ में करवाई।

१०. गुरदित्त सिंघ ज्ञानी (सम्पा.), अमरनामा (पातशाही १०), प्रकाश पुस्तकालय, पटियाला, पृष्ठ/बैत १६/५६.

११. उपरोक्त

१२. भट्ट वही मुलतानी सिंधी।

१३. भट्ट वही पूरबी दक्षिणी, खाता बझरउत बलउतो का।

१४. गुरु कीआं साखियां, पृष्ठ २८.

१५. वही सोढियां, हरिद्वार।

घल्लूघारा दिवस जून, १९८४ की वर्षगांठ पर विशेषत्या

आत्मिक सुख का बैकुंठ श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब

*-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ**

परमात्मा की महानता कोई जान नहीं सका है। उसकी महानता के दर्शन अवश्य किये जा सकते हैं जो उसकी कृपा में से प्रकट होती है। परमात्मा की कृपा चारों दिशाओं में बरस रही है। जो सुंदर सृष्टि उसने रची है यह उसकी दयालुता को कण-कण में प्रकाशित कर रही है। उसने विशाल सागर, कल-कल करती नदियां, गौरव-जड़ित पर्वत श्रृंखलायें, हरे-भरे वन, गहरा नीला अनंत आकाश तथा अथाह धैर्यवान धरती रची और चौरासी लाख प्रकार के जीव रच कर एक अपूर्व लोक का सृजन किया। मानव की रचना में तो परमात्मा ने सारी सृष्टि, सारे ब्रह्मांड की भावना को समाहित कर दिया। सृष्टि का एक-एक कण परमात्मा के विस्माद को प्रत्यक्ष करता है। उसने ऐसा क्यों किया, कैसे किया, यह वही जानता है :

तेरे कीते कंम तुधै ही गोचरे ॥
सोई वरतै जगि जि कीआ तुधु धुरे ।।
बिसमु भए बिसमाद देखि कुदरति तेरीआ ।।
सरणि परे तेरी दास करि गति होइ मेरीआ ।।

(पन्ना ५२१)

संसार में वही घटित हो रहा है जो परमात्मा ने पूर्व में ही तय कर दिया था। उसकी इच्छा के बिना संसार में कुछ भी हो पाना संभव नहीं है। उसका प्रत्येक कर्म, छोटा या बड़ा, अद्‌भुत है। उसकी बनाई चींटी भी विस्मयकारी है और हाथी भी। सारा कुछ देख-देख कर विस्मित रह जाना पड़ता है। उस समय हर मन में यह कामना उत्पन्न होती है कि जिस परमात्मा की महानता ऐसी है वह कृपा करे तो उसका भी उद्धार हो जाए, पाप मिट जाए, चौरासी लाख योनियों में आवागमन के चक्र से मुक्ति प्राप्त हो जाये। दयालु परमात्मा कभी शरणागत को निराश नहीं करता। वह सदैव कल्याण का मार्ग दिखाता है। कलियुग में जब पाप बढ़ गये, धर्म आलोप हो गया, परमात्मा ने धर्म की पुनः प्रतिष्ठा का महान कार्य श्री गुरु नानक साहिब को सौंपा। श्री गुरु नानक साहिब की अमृत बाणी से प्रस्फुटित हुए प्रेम-भावना के अमृत-प्रवाह से निराशा के मरुस्थल बन चुके मनों में आशा और विश्वास की कोपलें फूटने लगीं। जहां अधर्म ने जीवन दुष्कर कर दिया था वहां अमृतमयी गुरबाणी के कौतुक से परमात्मा की कृपा बरसने लगी।

लाहौर सहरु अंम्रित सरु सिफती दा घरु ।।

(पन्ना १४१२)

श्री गुरु नानक साहिब ने लाहौर में क्रूरता, अधर्म और खौफ का कहर बरसते हुए देखा था। श्री गुरु अमरदास जी ने उपरोक्त वचन किया कि श्री गुरु नानक साहिब के पुण्य प्रताप ने उस

**ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३, ८४९७८-५२८९९*

स्थिति को बदल दिया है। अब जहर और कहर को तोड़ने का अमृत प्रकट हो चुका है। श्री गुरु अमरदास जी ने ही वह स्थान चिन्हित किया जहां अमृत सरोवर, अमृतसर और श्री हरिमंदर साहिब की अक्षय सौगात मानवता को प्राप्त हुई। 'अमृतसर' पूजा के उस थाल की तरह था जिसमें गुरु-शबद के भावों को सजाया गया और परमात्मा को अर्पित किया गया। गुरु-शबद की पावन भावनाओं को स्वीकार कर परमात्मा ने अपनी कृपा की दात उस थाली में डाल दी, जिससे श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब का आकार मिला।

हरि जपे हरि मंदरु साजिआ
संत भगत गुण गावहि राम ।।
सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपना
सगले पाप तजावहि राम ।।
हरि गुण गाइ परम पदु पाइआ
प्रभ की ऊतम बाणी ।।
सहज कथा प्रभ की अति मीठी
कथी अकथ कहाणी ।।
भला संजोगु मूरतु पलु साचा
अबिचल नीव रखाई ।।
जन नानक प्रभ भए दइआला
सरब कला बणि आई ।। *(पन्ना ७८१)*

श्री गुरु अरजन साहिब से ही परमात्मा ने अमृत सरोवर के मध्य श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब की रचना की सेवा करवाई थी। उपरोक्त वचन भी श्री गुरु अरजन साहिब का ही है। इस वचन में गुरु साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब के निर्माण में अपने किसी भी तरह के रंच-मात्र योगदान का उल्लेख न करते हुए सारा श्रेय परमात्मा को दिया है। उन्होंने कहा कि परमात्मा ने धर्म के मार्ग पर चलने वालों की भक्ति और भावना को स्वीकार करते हुए धरती पर अपना घर, परमात्मा का वह दर सजाया जहां से उसे अपने मन में बसाया जा सकता है। उस दर पर सभी भक्त परमात्मा के गुणों का महिमा का गायन करते हैं, जिससे उनके जन्मों-जन्मों के पाप मिट जाते हैं। वहां परमात्मा का ध्यान करने से परमात्मा का मिलाप प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार परमात्मा का घर उसके भक्तों के लिये परमात्मा के दरबार की तरह है। उस दरबार में अपनी याचना प्रस्तुत करने की भाषा गुरबाणी है। परमात्मा के दरबार में उसी की स्वीकार्यता है। गुरु साहिब ने कहा कि इस दरबार की नींव परमात्मा ने श्रेष्ठ संयोग, भले मुहूर्त और शुभ पलों में रखी। इसका आशय यह है कि परमात्मा ने अति दया, कृपा, उदारता और प्रेम में आकर श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब की नींव रखी। उल्लेखनीय है कि सिक्ख धर्म में मुहूर्त, संयोग जैसी अवधारणाओं का कोई स्थान नहीं है और समस्त काल-खंड परमात्मा के अधीन है, इसलिए भले-बुरे समय का विचार ही आधारहीन है। इसे ऐसे समझा जाये कि श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब की रचना परमात्मा की अपार कृपा का फल था और धरती पर उसने अपना दर-घर स्वयं सुशोभित किया।

महत्वपूर्ण बात यह है कि परमात्मा के इस

दर-घर को उसके दरबार के रूप में देखने से ही पूर्ण सत्य प्रकट होता है। परमात्मा को गुरु साहिबान ने राजाओं के राजा, महाराजाओं के महाराजा के रूप में देखा, जो मनुष्य की समस्त इच्छायें पूरी करने वाला है। वह रोजी-रोटी देने वाला है, सम्मान देने वाला है, आसरा देने वाला है, रोग-सोग दूर करने वाला है, पाप क्षमा करने वाला है, विकारों, माया के बंधन से मुक्त कर सहज, संतोष, संयम, प्रेम, सेवा, परोपकार आदि गुण प्रदान करने वाला है। गुरसिक्ख तो परमात्मा से आटा, दाल के अलावा दूध के लिये गाय, सोने के लिये अच्छा बिस्तर और सुशील पत्नी भी मांग लेता है। ऐसी मांगें दरबार में ही पूरी होती हैं। गुरबाणी ने परमात्मा को एकमात्र दाता माना है तो दरबार भी एकमात्र परमात्मा का ही हो सकता है और यही उपर्युक्त भी है। यही कारण है कि ज्ञान के प्रकाश में यह मात्र श्री हरिमंदर साहिब नहीं, यह मानवता के लिए परमात्मा का श्री दरबार साहिब भी है, जहां परमात्मा की बाणी, धुर की बाणी, श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का राज्य स्थापित है। इसे श्री दरबार साहिब के रूप में देखने और समझने का यत्न करने पर ही इसकी महानता का ज्ञान होना आरंभ होता है। जिसे ज्ञान नहीं, उसके लिए यह मात्र 'स्वर्ण मंदिर' हो सकता है। जो कोई इसके निकट आता है उसे यह श्री हरिमंदर साहिब नजर आता है। जब दृष्टि मर्म तक जाने की चेष्टा करती है उसे सच्चा स्वरूप श्री दरबार साहिब प्रकट दिखता है। जिसने इसे एक भवन अथवा 'स्वर्ण मंदिर' के रूप में देखने की भूल की उसे उसकी धृष्टता का फल भुगतना पड़ा है। परमात्मा के दरबार का अपमान करने से बड़ा पाप और क्या हो सकता है! इस दरबार में तो परमात्मा के दर्शन करने के लिए जाया जाता है। यहां परमात्मा दर्शन देता है :

दरमादे ठाढे दरबारि ।।
तुझ बिनु सुरति करै को मेरी
दरसनु दीजै खोल्हि किवार।। (पन्ना ८५६)

यह ऐसा महान दरबार है जहां उन सबको जीवन-आधार प्राप्त होता है जो हर जगह से निराश हो चुके होते हैं, जिनकी सहायता हेतु कोई आगे नहीं आता है। परमात्मा की कृपा की आस लेकर हताश, दीन-हीन यहां इस विश्वास के साथ आते हैं कि परमात्मा उन्हें उबार लेगा। परमात्मा का दरबार ही सबसे बड़ा और एकमात्र दरबार है। भक्त कबीर जी ने उपरोक्त वचन करने से पूर्व स्पष्ट किया कि परमात्मा के समान राजा कोई नहीं है। जो संसार में स्वयं के शक्तिशाली होने का दावा कर रहे हैं वे आधारहीन एवं झूठे हैं। उस दरबार में लोग खड़े होकर दर्शन की याचना करते हैं। श्री दरबार साहिब में सूर्योदय से पहले ही दर्शन की लंबी कतारें लग जाती हैं। बालक, वृद्ध, युवक, स्त्रियां और पुरुष घंटों कतार में लग कर, माथा टेकने की प्रतीक्षा करते हैं। भक्त कबीर जी का वचन प्रतिदिन सत्य सिद्ध होता है। कतारें कभी कम नहीं हुईं, लंबी ही होती जा रही हैं। लगता है कि इस दरबार में मानों पूरा ब्रह्मांड समा गया है।

कोटि चंद्रमे करहि चराक ।।

सुर तेतीसउ जेवहि पाक ।।
नव ग्रह कोटि ठाढे दरबार ।।
धरम कोटि जा कै प्रतिहार ।। (पन्ना ११६२)

एक अकेला चंद्रमा पूरी धरती का अंधेरा भगा कर चांदनी का प्रकाश फैला देता है। परमात्मा के दरबार को कोटि-कोटि चंद्रमा अपने शीतल प्रकाश से प्रकाशित कर रहे हैं। श्री दरबार साहिब में जब भी जाएं, चारों ओर हो रहा प्रकाश दिन और रात का एहसास ही नहीं होने देता। उपरोक्त वचन में भक्त कबीर जी ने आगे कहा कि परमात्मा के दरबार में तेंतीस करोड़ देवी-देवता भोजन छक रहे हैं और छका रहे हैं। यह श्री दरबार साहिब में अक्षरश: सिद्ध हो रहा है। यहां दिन-रात अनवरत चलने वाले गुरु के लंगर को देख कर कोई भी आश्चर्यचकित रह जाता है। उसके मन में एक ही विचार आता है कि ऐसा लंगर किसी दैवीय शक्ति से ही संचालित हो सकता है। प्रेम-भावना से लंगर छकते लाखों लोग, सेवा करते असंख्य लोग मानवता का सबसे सुंदर चेहरा पेश कर रहे होते हैं। यह दृश्य संसार में कहीं और देखने को नहीं मिलता। उपरोक्त वचन के अनुसार मात्र नौ ग्रह नहीं, इस तरह के लाखों नौ ग्रह परमात्मा के दरबार में करबद्ध खड़े हुए हैं। इन्हें शुभ-अशुभ शक्तियों का प्रतीक माना गया है। श्री दरबार साहिब में लोग इस विश्वास के साथ आते हैं कि यहां कोई भी प्रार्थना व्यर्थ नहीं जाती और इस दरबार की कृपा हो तो कुछ भी असम्भव नहीं है। यहां बहुत-से चमत्कार होते देखे और सुने गये हैं। कोटि-कोटि धर्मराज यहां के दरबान हैं अर्थात् यह न्याय और नीति का उद्गम-स्थल है। कोई भी, किसी भी जाति, धर्म, वर्ण, वर्ग का हो, उसके यहां प्रवेश पर कोई प्रतिबंध नहीं है। पूरा संसार ही यहां दिख जाता है। श्री दरबार साहिब ऐसा पावन स्थान है जहां दिन-रात केवल गुरबाणी का कीर्तन होता है और अरदास होती है। इसके अतिरिक्त श्री दरबार साहिब में अन्य कोई गतिविधि नहीं होती। यही बात श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ७८१ पर सुशोभित, पूर्व में उल्लिखित श्री गुरु अरजन साहिब के वचन में भी कही गयी है कि परमात्मा की कथा का ही कथन, वर्णन यहां हो रहा है, जिससे अधिक प्रसन्नता प्रदान करने वाला प्रसंग कोई अन्य नहीं हो सकता है। गुरु साहिब ने कहा कि इस स्थान की आधारशिला अत्यंत शुभ संकल्प और पावन उद्देश्य के साथ रखी गई है, इसीलिए यह अविचल हो गया है। इसका आधार इतना मजबूत है कि कोई कुदृष्टि, षड्यंत्र, आक्रमण इसके गौरव का रंच-मात्र भी ह्रास नहीं कर सकता है।

ऐसा नहीं कि किसी ने श्री दरबार साहिब पर कुदृष्टि नहीं डाली, षड्यंत्र नहीं रचे गये, हमले नहीं हुए। सब कुछ हुआ। श्री दरबार साहिब के अस्तित्व को ही मिटा देने के प्रयास हुए। मुगलों, अंग्रेजों और आजादी के बाद भी श्री दरबार साहिब अपनी ही कही जाने वाली सरकारों के निशाने पर रहा। उसके भवन को धराशायी किया गया, उसकी मर्यादा को तोड़ा गया, पवित्रता को भंग किया गया। समय-समय पर जिन विभिन्न

शक्तियों ने श्री दरबार साहिब को अपने निशाने पर लेने का प्रयास किया, उनमें कई समानतायें थीं। पहली बात तो यह कि उन्हें इस पवित्र स्थान की महानता का ज्ञान ही नहीं था। दूसरी समानता यह कि सत्ता का अहंकार उनके सिर चढ़ कर बोल रहा था। तीसरी बात यह कि ऐसी शक्तियां श्री दरबार साहिब को एक भवन के रूप में ही देखती थीं। उन्हें ज्ञात ही नहीं था कि दिख रहे श्री दरबार साहिब ने एक श्री दरबार साहिब हर गुरसिक्ख के हृदय में भी बसा रखा है। चौथी समानता यह कि उन्हें ज्ञात ही नहीं था कि श्री दरबार साहिब श्री गुरु ग्रंथ साहिब से सजता है, भवन की भव्यता से नहीं और शबद-गुरु की सत्ता अक्षय है। अंतिम बात यह कि श्री दरबार साहिब की उन पर कृपा नहीं थी अर्थात् वे धर्म से रहित थे। वे इस योग्य ही नहीं थे कि श्री दरबार साहिब की कृपा प्राप्त कर अपना जीवन संवार लेते। यह दरबार तो सभी का सांझा दरबार रहा है, जहां किसी धर्म, जाति की नहीं, मानव-मात्र की बात होती है। यही कारण था कि श्री दरबार साहिब की महानता से टकराने का दुस्साहस करने वालों को इतिहास ने ही अस्वीकार कर दिया।

श्री दरबार साहिब के विरुद्ध किया गया हर षड्यंत्र, हर हमला गुरसिक्ख के मन पर हमला था। हमला अब्दाली ने किया और भारतीय सेना ने जून, सन् १९८४ में किया। अब्दाली के हमले इतिहास बन चुके हैं, किन्तु जून, सन् १९८४ का हमला अभी भी कल की ही बात की तरह है, क्योंकि उसे अपनी आँखों से देखने और भुगतने वाली पीढ़ी अभी जीवित है। यह मात्र हमला नहीं था, जिसने श्री दरबार साहिब और श्री अकाल तख्त साहिब के भवन तोड़े और सरोवर का पानी निर्दोष, निहत्थी सिक्ख संगत के खून से लाल कर दिया था। जो श्रद्धालु श्री गुरु अरजन साहिब का शहीदी पर्व मनाने आये थे वे स्वयं शहीद हो गये। उन्हें संभलने का अवसर ही नहीं मिला। किसी ने सोचा भी नहीं था कि जनता की चुनी हुई सरकार जन-भावनाओं के प्रति इतनी क्रूर हो सकती है अथवा वह सिक्खों को भारत की जनसंख्या का हिस्सा ही नहीं मानती। कारण कोई भी थे, किन्तु वे आम सिक्ख की श्रद्धा, श्री दरबार साहिब की पवित्रता और निर्दोष लोगों के खून की कीमत से बड़े नहीं थे। कोई शासक जब यह आंकलन करने में असमर्थ रहता है तो प्रमाणित होता है कि वह शासक बनने योग्य नहीं है। इस हमले का पड़ने वाला प्रभाव दूरगामी सिद्ध हुआ। नवंबर, सन् १९८४ के सिक्ख नरसंहार ने परिवारों का नाश कर दिया, नन्हें बच्चों को अनाथ कर दिया। सन् १९८४ के जून और नवंबर के महीनों के विध्वंस मानवता का सबसे आपराधिक और घृणित चेहरा बन कर सामने आये। इस अंतराल में सिक्खों के सबसे पावन स्थान और आम सिक्ख तक पूरी तरह से तत्कालीन भारत सरकार के निशाने पर रहे। इसके दंश ऐसे हैं जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी महसूस किये जाते रहेंगे और यह कल की ही बात बनी रहेगी।

यह कानून व्यवस्था की नहीं मानवीय सोच

की विफलता थी। जब भी श्री दरबार साहिब पर हमला हुआ है यह मात्र किसी स्थान पर हमला नहीं, सिक्खों की चेतना पर हमला था, ताकि उनके मनोबल को तोड़ कर उन्हें कमजोर किया जा सके। अंग्रेज़ भी यही समझते थे कि सिक्खों को ताकत गुरुद्वारों से मिलती है। यही कारण था कि अंग्रेज़ गुरुद्वारों को सिक्खों के नियंत्रण से दूर रखना चाहते थे, किन्तु परमात्मा को यह मंजूर नहीं हुआ। अंग्रेजों के काल में ही गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर आरंभ हुई और सिक्खों ने अंग्रेजों के काल में ही सभी गुरुद्वारों का प्रबंध अपने हाथों मे लेने व गुरुद्वारा एक्ट पारित करवाने में अपार सफलता प्राप्त कर ली। हर विषम स्थिति ने सिक्ख कौम को मजबूत बनाया है। जिस दल के शासन-काल में जून, १९८४ और नवंबर, १९८४ के कत्लेआम हुए, बाद में उसी दल की विवशता जो भी रही हो, अपने आप को पीछे धकेल कर एक सिक्ख को लगातार दस वर्ष तक भारत का प्रधानमंत्री बनाना पड़ा था। परमात्मा बस, संकेत ही देता है। उन संकेतों को हम जिस प्रकार ग्रहण करते हैं वैसा ही अपना भाग्य लिखते हैं। सिक्खों के मनोबल का स्त्रोत क्या है और कैसे सिक्ख आज वैश्विक कौम बन कर संसार के लगभग हर देश में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रहे हैं, इसे समझने के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब को समझना पड़ेगा। इसके लिये कई जन्म कम पड़ेंगे। यदि भावना हो तो परमात्मा की कृपा से पलक झपकते ही उद्धार हो जाता है। श्री अकाल तख्त साहिब का भवन पूरी तरह से धराशायी कर दिया गया था। बाद में सरकार ने सदाशयता का प्रदर्शन करते हुए इसे पुनः बनवाने का प्रयास किया। सिक्खों ने इसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि यह मात्र भवन नहीं, भावनाओं का प्रतीक था। सिक्ख संगत ने स्वयं कार सेवा कर इसका पुनर्निर्माण किया। यह भी सिद्ध हुआ कि सिक्खों का मनोबल तोड़ना संभव नहीं है।

श्री दरबार साहिब के प्रत्येक हमले को सिक्खों ने अपने शरीर पर हमला माना है। सारी कुर्बानियाँ इसी भावना के अधीन हुई हैं, क्योंकि सिक्ख श्री दरबार साहिब में अपनी आत्मा के दर्शन करते हैं। सिक्ख संसार के किसी भी कोने में बैठे हों श्री अमृतसर साहिब का दर्शन उनकी अरदास में अनिवार्य रूप से शामिल होता है। एक श्री दरबार साहिब प्रत्येक सिक्ख के हृदय में है, जिसे उसने सात कोटद्वारों में सुरक्षित किया हुआ है। ये कोट हैं- केश, कंघा, कड़ा, कृपाण, कछहिरा, खंडे-बाटे का अमृत और गुरु-शबद का अमृत। इन सात कोटद्वारों के बाद स्थापित श्री दरबार साहिब तक अस्त्र-शस्त्र तो क्या, किसी की मंदी सोच भी नहीं पहुंच सकती। सिक्ख अपने अंदर के पूर्ण सुरक्षित श्री दरबार साहिब का प्रतिबिंब ही अमृत सरोवर के मध्य स्थित श्री दरबार साहिब में देखता है। जब तक सिक्ख जीवित रहता है उसके मन में गुरु की कृपा से गुरबाणी के भाव का दरबार सजा रहता है। सिक्ख के इस आत्मिक बल को क्षीण करना बड़ी से बड़ी सांसारिक शक्ति के वश में नहीं रहा है। वह गहरा आहत हुआ है, जब-जब भी श्री दरबार

साहिब पर हमला हुआ है। ७५ वर्षीय शहीद बाबा दीप सिंघ जी सन् १७५७ में श्री दरबार साहिब पर हुए हमले के प्रतिक्रम में अफगानों से युद्ध करते हुए कटा हुआ शीश हाथ की हथेली पर टिका कर पंद्रह किलो के खंडे से वार करते हुए श्री दरबार साहिब की परिक्रमा तक चले आये थे और अपना बलिदान दिया था। श्री दरबार साहिब की मर्यादा के लिये सिक्खों ने अपने जीवन फूलों की तरह अर्पण किये थे।

श्री दरबार साहिब का परिसर संसार का ऐसा भू-खंड है, जहां मानव सभ्यता की गरिमा स्थापित करने के लिये जो महान कार्य हुए, उनके लिये मानव समाज को सदैव कृतज्ञ होना चाहिये। इस स्थान के नजदीक श्री गुरु अरजन साहिब ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरूप तैयार किया और उसमें सिक्ख गुरु साहिबान के अतिरिक्त भारत के विभिन्न क्षेत्रों, समुदायों के पंद्रह भक्तों की बाणी को भी शामिल कर इसे सर्वस्वीकार्य बनाया। इसी स्थान पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने शस्त्र धारण कर सिक्खों में वीरता का भाव पैदा किया। श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना कर परमात्मा की सत्ता को विधिवत प्रकट किया गया। आज यहां से सम्पूर्ण सिक्ख जगत की गतिविधियां निर्देशित की जा रही हैं।

विभिन्न धर्मों के धर्म-स्थान बहुत-से हैं। उनका अपना महत्व है। किसी की किसी अन्य से तुलना नहीं की जा सकती। सिक्ख धर्म में भी अनेक स्थान हैं, किन्तु श्री दरबार साहिब ऐसा पावन स्थान है जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब का उद्भव भी हुआ था और प्रथम दरबार भी सजा था, जिसकी सेवा स्वयं श्री गुरु अरजन साहिब ने की थी। उन्होंने ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब के दरबार की मर्यादा स्थापित की। उस समय जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरुआई नहीं प्राप्त हुई थी, तब भी श्री गुरु अरजन साहिब ने उन्हें राजसी सम्मान प्रदान किया था। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समकक्ष किसी का भी आसन नहीं रखा गया था। स्वयं गुरु साहिब नीचे जमीन पर बैठे थे। यह कौतुक परमात्मा ने स्वयं किया, क्योंकि यह कार्य भी स्वयं उसका ही था। ऐसा कौतुक पूरे संसार में बस, यहीं पर हुआ। यही इस स्थान का अपूर्व सौंदर्य है :

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ।।
बधोहु पुरखि बिधातै तां तू सोहिआ ।।

(पन्ना १३६२)

श्री अकाल तख़्त साहिब

-प्रिं. नरिंदर सिंघ सोच (दिवंगत)

विश्व का इतिहास पढ़ें तो तख़्त गिने नहीं जाते। तख़्तों पर कब्ज़ा किया जाता है या तख़्त बनाए जाते हैं। फसलों की तरह तख़्त उगते हैं, फसलों की तरह तख़्त काटे जाते हैं। पहले तख़्त होते हैं, फिर तख़्ता बन जाते हैं। तख़्तों की कहानियां नफ़रत के साथ भरी पड़ी हैं।

इस बात का समर्थन श्री गुरु नानक देव जी ने किया है और इसी बात की पुष्टि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने की है। न कोई राजा रहा है, न कोई तख़्त रहा है। चार दिन की पारी खेल कर सभी चले गए हैं।

काल के घेरे में आया कोई भी तख़्त सदा स्थिर नहीं रह सकता।

श्री अकाल तख़्त साहिब गुरु-बाणी का संकल्प है। यह केवल 'तख़्त' नहीं है। इसके साथ 'श्री' भी है, 'साहिब' भी है। 'अकाल' भी है। ये शब्द इसे विश्व के तख़्तों से अलग करते हैं।

विश्व के इतिहास में कौन-सा तख़्त है, जो लोक-कल्याण करता रहा है, कर रहा है और करता रहेगा? कौन-सा तख़्त है, जिसे काल ने निगल नहीं लिया? कौन-सा तख़्त है जिसके साथ 'साहिब' शब्द लगाया गया है? कौन-सा तख़्त है, जिसे 'जी' कह कर सम्मान दिया जाता है? कौन-सा तख़्त है जो रोजाना की अरदास का भाग बना है? इन लक्षणों वाला श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का संकल्प है।

श्री अकाल तख़्त साहिब पर कौन बैठा है? श्री गुरु नानक देव जी ने उसे 'करता पुरख' और 'अकाल मूरति' कहा है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'अकाल पुरख' कहा है। गद्य में विस्तार होता है। पद्य में संक्षेप हो जाता है। 'अकाल मूरति' और 'अकाल पुरख' एक ही बात है।

'अकाल पुरख' और 'अकाल मूरति' कोई मन्नत नहीं है, अस्तित्व है। वह अस्तित्व 'बोलता' है, 'बातें' करता है, 'दिशा' देता है, 'सहायता' करता है, जिम्मेदारियां सौंपता है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को सम्मान देकर अकाल पुरख ने कहा :--

सबसे पहले मैंने 'महाबली' पैदा किये। यह बल कमज़ोरों को ऊँचा उठाने के लिए था, उनकी रक्षा करने के लिए था। ज़ोर उनका नहीं था, उन्हें काम करने के लिए दिया गया था। बाहु-बल ने उन्हें पागल बना दिया। ताकत मूर्ख बना देती है, अंधा और बहरा कर देती है। ताकतवर को अपने बिना और कुछ दिखाई नहीं देता। उसे केवल एक शब्द बोलना आता है- 'मैं'।

यह 'मैं' संसार भर में इस कद्र फैल जाती

है, जैसे तेल की एक बूँद पानी पर फैल जाती है। 'बल' की 'मैं' दैत्य बनने से पहले नहीं रुकती। अत: सभी 'बली' दैत्य बन गए, 'रब के शरीक' बन गए। फिर 'मैं' 'तीन देवता' पैदा किए।'मैं' तो एक ही काफी होती है, यहां पर 'मैं-मैं-मैं' तीन इकट्ठा हो गईं। इन्होंने अपने-अपने साम्राज्य स्थापित कर लिए। 'ब्रह्मा' करता पुरख' (रचयिता) बन बैठा। 'विष्णु' पालनहार बन गया। 'शंकर' अटल होने का दम भरने लगा। एक तख़्त की जगह तीन तख़्त बन गए। तीनों तख़्तों से रोजाना तीन फरमान जारी होते। लोग आपस में लड़ते। फरमान आपस में झगड़ते। तीनों देवता आपस में दाँत पीसते। दंगल होते। कभी कोई जीतता, कभी कोई हारता।

इन तीनों से निराश होकर अकाल पुरख ने आठ गवाह खड़े किए, जो बताते हैं और साबित करते हैं कि करता पुरख है, अकाल मूरति है, परम पुरख है। पानी गवाह है कि पानी के बिना जीवन नहीं है। इतना पानी किसने बनाया है? क्या कोई इतना पानी बना सकता है? दूसरा गवाह हवा को बनाया। हवा के बिना भी कोई जिंदा नहीं रह सकता। हवा दूसरा गवाह थी कि परम पुरख है और वही सभी का जीवन-साधन है। लेकिन गवाह तो खुद ही वर्ण देवता बन कर पूजा करवाने लगा। हवा वर्ण देवता से तेज दौड़ने वाली थी, वो कैसे पीछे रह सकती थी! वह भी पूजा करवाने लगी। सूरज और चंद किसकी माँ-बेटी से कम थे! वे भी पूजनीय बन गए। एक 'तख़्त' की जगह ग्यारह 'तख़्त' बन गए। आग मांगने आए, घर के मालिक बन कर बैठ गए।

सिद्ध पैदा किए। वे ऋद्धियों-सिद्धियों के मजमे लगा कर बैठ गए। गोरख अपने ही गोरख-धंधे में उलझ गया। रामानन्द ने अपने नए राह बना लिए।

ऋषियों ने अपनी-अपनी स्मृतियां बना लीं और अपने नये पंथ चला लिए। हज़रत मुहम्मद साहिब ने अपने दीन को अलग करने के लिए 'सुन्नत' की निशानी कायम की।

जिसे भी थोड़ी-सी ताकत की गांठ मिली, उसने बड़ी दुकान खोल ली और दुकानदार बन कर बैठ गया।

गुरु के महलों की ऐतिहासिक महानता है। यहां पर गुरु पैदा हुए। यहां पर गुरु स्थापित किए गए। यहाँ पर महान बच्चे पैदा हुए। यहाँ पर गुरु बसे। यहाँ पर गुरु खेले। यहाँ पर गुरु जुल्म के विरुद्ध लड़े। यहाँ पर गुरु-महिलों (गुरु-पत्नियों) ने चक्कियों पर आटा पीसा। यहां पर गुरु-महिलों ने तंदूर में मिस्सी रोटियाँ लगाईं।

'हरिमंदर' संगत-स्थान है।'हरिमंदर' हरि का घर है। यहाँ पर शबद-ब्रह्म का निवास है। 'शबद' के सम्मान के लिए श्री गुरु अरजन देव जी नंगे पांव जाते हैं। शबद लेकर पालकी में 'शबद' को सुशोभित कर नंगे पांव साथ आते हैं।'बीड़' संपूर्ण करने के बाद भी चँवर झुलाते हुए नंगे पांव साथ आते हैं।

जिन हाथों ने बाणी लिखी थी, जो हाथ बाणी आने पर बाणी की ताल के साथ मिल कर बाणी लिखते थे, उन हाथों ने पहले श्री हरिमंदर साहिब का शिलान्यास किया और फिर श्री अकाल तख़्त साहिब की रचना की। बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास ईंटें और चूना पकड़ाने वाले थे।

इतिहास इस बात का भी साक्षी है कि श्री गुरु अरजन देव जी लाहौर जाने से पूर्व अपने उत्तराधिकारी गुरु का एलान कर गए थे। उस समय भी श्री गुरु अरजन देव जी, बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ये चारों थे।

'अकाल उसतति' बाणी श्री अकाल तख़्त साहिब जी के तख़्त पर सुशोभित अकाल पुरख की उपमा है। 'जापु साहिब' अकाल पुरख के समक्ष अभिवादन है।

एक बात याद रखने वाली है और गुरु साहिबान ने इस बात को पुनः- पुनः दोहराया है– 'बाणी धुर की' है, गुरुओं के माध्यम से आई है। वे तो बुलाने से ही बोलते हैं। वे खुद तो बोलना भी नहीं जानते। इसी लिए बाणी आदि सचु है, जुगादि सचु है, है भी सचु है, होसी भी सचु है। 'धुर की बाणी' 'धुर' के साथ जोड़ती है।'धुर' 'अकाल पुरख' है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी घोड़े पर सवार होकर श्री अमृतसर साहिब को आ रहे थे। श्री अमृतसर साहिब शहर की मंमटियां (इमारत का शिखर) नज़र पड़ती हैं तो आप जी घोड़े की लगाम खींच लेते हैं। घोड़े पर से नीचे उतर जाते हैं। धरती पर माथा टेकते हैं और कहते हैं– ''यह गुरुओं की धरती है। यहां पर पैदल चलना चाहिए।''

यहाँ पर केवल यही एक नगरी है, जिसे फख्र है कि उसे सात गुरुओं का चरण-स्पर्श प्राप्त है।

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुर हरिगोबिंद साहिब जी को बाबा बुड्ढा साहिब जी के पास पढ़ने भेजा था। उन्होंने शस्त्र-विद्या और शास्त्र-विद्या दोनों पढ़ाई थीं। यह सब कुछ भविष्य-काल को सामने रख कर किया गया था।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने दो कृपाणों की माँग की तो उसी समय बिजली की भांति चमकती दो कृपाणें आ गईं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की पोशाक 'दल-भंजन सूरमे' वाली थी।

गुरु जी ने गुरुआई की रस्म पूरी होने पर संगत से कहा,''पुत्र (पैदा) हो जाते हैं, मगर सिक्ख बनना पड़ता है। हो जाना आम बात है, मगर बनना परिश्रम का निष्कर्ष है। पुत्र को सिक्ख बनने की कोई मनाही नहीं। वह भी (सिक्खी की) कमाई कर सकता है। पुत्र के साथ-साथ सिक्ख भी बन सकता है।''

''आप सभी सिक्ख हो! आपने मेहनत की है। आपने सरोवर की खुदाई की। आपने श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण किया। आपने विशुद्ध श्रम द्वारा और खरे सौदे के साथ नगरी

को सम्मानजनक बनाया।''

''आप सिक्खों ने गुरु-पिता जी को दी गई यातनाओं के बारे में सुना है! आपने केवल सुना ही नहीं, आप भी गर्म लोह पर बैठे हो! आप भी देग में उबले हो! आपके सिर पर भी गर्म-गर्म रेत गिरती रही है! आप भी तीन रात और तीन दिन प्यासे रहे हो! भूखे रहे हो! आपको भी तीन दिन न सोने दिया, न लेटने दिया है! गुरु और सिक्ख दो शरीर, एक जान हैं। एक की पीड़ा दूसरे को होती है।''

सब संगत के हृदय तड़प रहे थे। सिक्खों की आँखें रो-रो कर सूजी हुई थीं और उनमें से आग की चिंगारियां भी निकल रही थीं। कई बादलों की भांति गरजे और बिजली की भांति कड़के थे। सिक्ख दाँत पीसते हुए आक्रोश जाहिर कर रहे थे।

कुछ देर के लिए गुरु जी शांत हो गए। फिर बड़े धैर्य से बोले, ''हमारा एक दूसरे में जड़ें जमा कर घना बसना सरकार को स्वीकार नहीं। श्री गुरु नानक देव जी के साथ भाई मरदाना जी, न पंडितों को अच्छे लगे और न ही वली कंधारी को। बाबर द्वारा किए कत्लेआम से संबंधित भर्त्सनामय शबद बाबर कैसे सुन सकता था? बाबर की फ़ौज को 'पाप की बारात' कहने वाले को जेल में डालना और उससे चक्की पिसवाना बाबर की कूटिल नीतियों के अनुकूल बैठता था।''

''जो बच्चों की कुश्तियां कराए और अपने सिक्खों के लिए दिनों में ही पढ़ाई जाने वाली 'पैंती' (वर्णमाला) तैयार कर ले और फिर शासक के सामने खड़े हो जाने पर भी निडर रहे, उठ कर कमान की भांति झुक कर शासक को सलाम न करे, तो तत्कालीन राजनीति के अनुसार उसका सिर काटने का शासन को अधिकार है। उपरोक्त सभी बातें शासन को पतन की ओर ले जाने वाली हैं।''

''जो वर्ण-आश्रम की दीवारें लंगर लगा कर गिरा दे, वह दोषी है और उसे सरकारी कचहरी में उपस्थित होकर साबित करना पड़ता है कि वह निर्दोष है।''

हकूमत की नजर में गुरुदेव पिता जी का सबसे बड़ा दोष यह है कि मुसलमान 'नमाज़' के साथ 'जपु' पढ़ने लगे और हिंदू 'गीता' के साथ 'सुखमनी साहिब' पढ़ने लगे। सभी धर्मों के आदमी प्रातः काल 'आसा की वार' और रात को 'सोदरु' का पाठ मिलकर करते हैं। उनका निशाना है कि करता पुरख का धर्म एक है। वे खुद एक हैं, इसलिए उस एक के दो धर्म नहीं हो सकते। कलियुग में धन पक्षपात पैदा करता है और काम, क्रोध, ईर्ष्या, वैर-विरोध के कारण एक-दूसरे को मारते-मारते सभी पक्ष विनाश के मुँह में जा गिरते हैं। हमारा पक्ष बलशाली है। धर्म के वर्ग में कोई विरोधी नहीं होता। उसमें कभी वाद-विवाद नहीं होता। वाद के लिए दो का होना एक शर्त है, परन्तु हम एक है।''

''गुरु-पिता जी जाते हुए फ़ैसला कर गए हैं कि शस्त्र उठा लो। पांच प्याले-- सत्,

संतोष, दया, धर्म और धैर्य से भरे हुए थे। सत् की पराकाष्ठा को छू लिया है। संतोष की हद भी खत्म कर दी है। दया की चोटी भी सर कर ली गई है। धर्म का स्वरूप निखार दिया है। धैर्य का नमूना आपके सामने है।''

''हमने अब फ़रियादी नहीं बनना। भिखारियों को मनचाही चीज़ कोई नहीं देता। पराए दर पर अलख जगाने की अपेक्षा मरना हज़ार गुना अच्छा है। हमने भेड़ों की भांति सिर झुका कर नहीं मरना। शेर की भांति सामने डट कर मरना है।''

कुछ देर शांत रहकर गुरुदेव ऊँची आवाज़ में बोले, ''मेरे दोनों हाथों में दो कृपाणें हैं। ये दो होते हुए भी अकेली हैं, जब तक प्रत्येक सिक्ख के पास भी दो-दो कृपाणें न हों, दो-दो पिस्तौल न हों, दो-दो तुफंग न हों, दो-दो घोड़े न हों, दो-दो तोपें न हों।''

''बड़े काम के लिए बहुत-से हाथ चाहिए। अकेले हथियार भी निर्जीव होते हैं। कायर के हाथ में पकड़ी कृपाण को सभी लानत देते हैं। अनजान सवार घोड़े को गधा बना कर रख देता है। गलत निशानेबाज की तोप का गोला आतिशबाज़ी का गोला बन कर रह जाता है।''

''कोई एक भी सिक्ख कमज़ोर न रह जाए! शरीर को लोहगढ़ बनाओ! गाँव-गाँव गतका खेलना शुरू कर दो! नेजेबाज़ी का अभ्यास शुरू कर दो! अश्व-दौड़ के मुकाबले शुरू कर दो। वह जवानी श्रापित है, जो देश के काम नहीं आती! वह भट्टी कौम की चिता है, जो हथियार नहीं बनाती!''

''युवतियाँ चरखा चलाएं! शूरवीरों के ज़ख्मों पर पट्टी बांधने के लिए कपड़ा बुनें! अपने घर को एक मोर्चा बना दो! जब तक प्रत्येक घर गुरु का लंगर न बन जाए, प्रत्येक घर गुरु का द्वार न बन जाए, प्रत्येक घर के आदमी गुरु के साथ न हो जाएँ, श्री अकाल तख़्त साहिब का शासन स्थापित नहीं हो सकता।''

''लोहा गर्म एक बार हुआ है, मगर इसका ताप हयाती तक हमारे लहू को गर्म करता रहेगा! शीश पर गर्म रेत एक बार पड़ी है, मगर यह सिक्ख कौम को कभी भी लम्बी तान कर सोने नहीं देगी! देग एक बार उबली है, मगर हमारा ख़ून जुल्म के विरुद्ध सदा के लिए उबलता रहेगा! सच्चे शासन का झंडा धर्म का होता है। उसके फरहे सत्य के होते हैं। जहाँ निर्दोष मारे जाते हों, वह शासन नहीं, कसाई घर होता है।''

''आप श्री अकाल तख़्त साहिब की फ़ौज हो! इस सेना का सच्चा सैनिक वही है, जो तंगली (पंजी) और तलवार की मुट्ठी एक समान समझने लगे! हल की मुट्ठी, फरसे का दस्ता और बंदूक पकड़ते समय अनभिज्ञता महसूस न करे! जितने उत्साह के साथ फ़सल काटते हैं, उतने ही उत्साह के साथ ज़ालिमों की लाशों के ढेर लगा दें! अब आप दसवंध धन का भी निकालो! समय का दसवंध भी निकालो और काम का भी दसवंध

निकालो!''

''हम लड़ना नहीं चाहते, परन्तु हमें लड़ने के लिए मजबूर किया जाएगा। लड़ना मजबूरी है, मगर जीतना ज़रूरी है। लड़ाई इंसानों एवं हथियारों के साथ लड़ी जाती है, मगर जीती आदर्श के साथ जाती है। उत्साह, इच्छा, चाव और बल शरीर की अपेक्षा मन में ज्यादा होता है। जो फ़ौज सिर पर कफ़न बांध कर लड़ती है, वह कफ़न शत्रु के लिए होता है। जो सेना मन में डर लेकर लड़ती है, वह अपने साथ अपने लिए कब्रिस्तान खोद कर मैदान में ले जाती है।''

''मेरी एक बात याद रखना, समय कभी कम नहीं होता! हम यत्न कम करते हैं। कम समय में भी बड़े यत्न किये जा सकते हैं। अधिकतर समय मशविरा करने में ही गंवाया जाता है। आपने समय की तरफ देखने की बजाय अपने बाहुबल का प्रयोग करना है।''

गंभीर होकर गुरु जी ने कहा :--

''मैं आपको शब्द देकर, ख़्याल देकर, प्रेरणा देकर, आदर्श देकर गतिशील कर रहा हूं। श्री अकाल तख़्त साहिब पर उन हथियारों के हार चढ़ेंगे, जो बाणी पढ़ते हुए चलते रहे होंगे और बाणी के आदर्शों के लिए उठाए गए होंगे।''

कुछ देर शांत रह कर गुरु जी पुनः बोले :-

''ये कृपाणें पकड़ी तो आज हैं, परन्तु आज के बाद ये हमारा एक अंग बन कर रहेंगी। ये केवल इस पीढ़ी के वृद्धों, जवानों और बच्चों के लिए नहीं हैं, हमारी हर पीढ़ी यह विरासत आने वाली पीढ़ी को सौंप कर जायेगी। हम पहले संत हैं और फिर सिपाही हैं।''

विश्व-इतिहास के विद्यार्थी यह पढ़ कर दंग रह जाते हैं कि श्री अमृतसर साहिब चार वर्ष के थोड़े-से समय में तीर्थ के साथ-साथ एक अजेय लोहगढ़ किला भी बन गया। इसके चारों तरफ़ सुरक्षा के लिए फ़ौजी दीवार बन गई।

गुरु जी के पास आग में, दरिया में और बरसती गोलियों में तीर की भांति निशाने पर पहुँचने वाले फ़ौजी ढंग से प्रशिक्षित आठ सौ घोड़े थे। तीन सौ वे घुड़सवार थे, जो बिजली की भांति कड़क कर दुश्मन पर वार करते थे। साठ तोपची थे, जिनका निशाना कभी भी चूकता नहीं था। सभी सिक्ख संत, सिपाही बन गए।

केवल २० वर्ष के अल्प समय में सारी कौम फ़ौजी (सिपाही) भी बन गई। थोड़े ही वर्षों में चार भयानक लड़ाइयां भी लड़ीं और उनमें विजय भी प्राप्त की। चलती जंग में बारात भी आई और बीबी वीरो जी की शादी भी की।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब महाराज को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया। वयोवृद्ध बाबा बुड्ढा जी ने 'रहरासि' बाणी के पाठ के बाद एक चौकी आरंभ कर दी, जिसमें बाबा बुड्ढा जी खुद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की श्रीसाहिब लेकर चलते थे। यह चौकी

ऋतुओं के अनुसार रागबद्ध रीतियों में, जोड़ी बनाकर शबद पढ़ती, सरोवर की तथा श्री हरिमंदिर साहिब की परिक्रमा करती। सैकड़ों की संख्या में संगत इस चौंकी के साथ होती और हज़ारों की संख्या में बैठी संगत उठ कर खड़ी हो जाती और हाथ जोड़ कर सम्मान भेंट करती तथा माथा टेकती।

बाबा बुड्ढा जी श्री अमृतसर साहिब से गुरु-प्रेमियों की छोटी-छोटी चौकियाँ ग्वालियर के किले की तरफ भी भेजते, जो नंगे पांव गुरु के शबद पढ़ती हुईं, पड़ाव-दर-पड़ाव पार करती हुईं ग्वालियर के किले की दीवारों के पास पहुँचतीं। अरदास कर, माथा टेक कर फिर शबद पढ़तीं और पड़ाव-दर-पड़ाव पार कर फिर श्री अमृतसर साहिब पहुँच जातीं।

इन अमृत-चौकियों की एक लम्बी शृंखला श्री अमृतसर साहिब से लेकर किला ग्वालियर में दिन-रात चलती रहती थी। रास्ते में आने वाले गाँवों के लोग इनसे गुरु जी की बातें सुनते, तो पहले उनका हृदय कांप जाता, फिर उनकी आँखों में से भी चिंगारियां निकलने लगती।

बाबा बुड्ढा जी की यह चलाई हुई जोशीली और युवा लहर ने हुकूमत का तख़्ता हिला कर रख दिया। वह सोचने लगी कि पंचम गुरु जी को शहीद करना उनकी भयानक भूल थी। छठम गुरु जी को ग्वालियर के किले में कैद करना जलती हुई आग पर तेल डालने वाली बात है।

कमाल की बात यह है कि हुकूमत गुरु जी को किले से बाहर लाना चाहती है। गुरु जी हुकूमत के समक्ष शर्त रखते हैं कि बावन बाग़ी राजा भी हमारे साथ रिहा करो। सरकार अपनी प्रतिष्ठा बचाए रखने के लिए कहती है कि ठीक है, जो आपका दामन थाम कर बाहर आ सकते हों।

वे तो पहले ही दामन थाम चुके थे। गुरु 'शरण का योद्धा' है, जो शरणागत की रक्षा करता है।

राजा गुरु को बंदी बना कर ग्वालियर के किले में भेजता है, गुरु बंदी-छोड़ बन कर किले में से बाहर आता है।

पंथ गुरु-रूप है, जो मिल कर गुरबाणी के अनुसार, प्रमाणिक इतिहास के अनुसार और परंपरा के अनुसार फ़ैसला कर सकता है। परन्तु, यह गुरुओं का फ़ैसला है कि श्री अकाल तख़्त साहिब पर अकाल पुरख स्वयं शोभित हैं। शेष सभी सेवादार हैं। कोई प्रमुख सेवादार है और कोई साधारण सेवादार है।

महाराजा रणजीत सिंघ की पंथक सोच

*-स. हरभजन सिंघ**

सिक्ख कौम महाराजा रणजीत सिंघ पर फ़ख्र करती है, क्योंकि वे पंजाब के ही नहीं बल्कि हिंद उप महाद्वीप के आखिरी स्वतंत्र, आज़ाद और खुदमुख्तार शासक थे, जिनकी कीर्ति पूरे संसार में फैली हुई थी। उन्होंने ऐसा सिक्ख राज (सत्ता) कायम किया, जिसमें तीन कौमें- सिक्ख, हिंदू और मुसलमान बराबर की हिस्सेदार थीं। उन्होंने गुरु-आशय के अनुसार सरबत्त के भले का मार्ग चुना, जहाँ उन्होंने शासन-काल में हर किसी को अपने-अपने धर्म के अनुसार जीने की आज़ादी थी। उन्होंने सिक्खों के धार्मिक स्थानों के साथ-साथ एवं बड़ी राशि जागीर हिंदुओं और मुसलमानों के धार्मिक स्थानों के नाम अलाट की, जो अब तक भी कायम हैं। वे जब भी मुल्क में दूर-दराज दौरे पर निकलते तो वे अपने धार्मिक स्थानों के साथ-साथ हिंदुओं और मुसलमानों के धार्मिक स्थानों पर भी पहुँच कर अपने श्रद्धा-सुमन भेंट करते। उन्होंने पंजाब में पंजाबियों का सांझा राज स्थापित किया, जिस सबसे अधिक आबादी उस समय मुसलमानों की थी, फिर हिंदुओं की और सबसे कम सिक्खों की, जो कुल आबादी की मात्र १० प्रतिशत ही थी। वे सिक्खों के ही नहीं, बल्कि सभी लोगों के बादशाह थे और सभी उनको प्यार से देखते थे। हज़ारों वर्ष बाद पंजाब में सिक्खों की सत्ता स्थापित हुई थी, जो पंजाब की सीमा से आगे फैलती हुई अफगानिस्तान, चीन व तिब्बत तक जा फैली थी।

उन्हें विरासत में अपना मिसलदारी राज मिला था, जिसकी बुनियाद मुग़ल हाकिमों और अफगानी हमलावरों के अत्याचार के समय से ही रखी जा चुकी थी। वे मिसलदारों के ऊँचे सिक्खी इख़लाक एवं आचरण से भी वाकिफ़ थे, जो अपनी कौम का वजूद बचाने के साथ-साथ मुगलों और विदेशी हमलावरों- नादिर शाह तथा अहमद शाह अब्दाली जैसे आक्रमणकारियों के साथ टक्कर लेते हुए हिन्दोस्तान की महिलाओं की मान-मर्यादा के रक्षक बने हुए थे।

इतना कुछ हासिल करने के बावजूद महाराजा ने अपनी पंथक सोच न गंवायी। उन्होंने अपने मुल्क के राजाओं और अमीरों को जीतने के बाद उन्हें गलियों में नहीं रुलने दिया, बल्कि उनके निर्वाह के लिए जागीर उनके नाम लगा दी। उन्होंने अपने आप को राजा या महाराजा न कहलवाया और न ही सरकारी दस्तावेजों में लिखवाया। वे अपने आप को 'खालसा जी' कहलवाते रहे और सरकारी दस्तावेजों में भी अधिक से अधिक 'सरकार खालसा जी' लिखते रहे। महाराजा का दरबारी इतिहासकार लाला सोहन लाल सूरी अपने फ़ारसी में लिखे हुए इतिहास 'उमदात-उत-तवारीख' में भी उन्हें 'खालसा जी','सरकार खालसा जी' ही लिखता

**बी-४३०, भाई रणधीर सिंघ नगर, लुधियाना, फोन : ९८७२८-१०८२०*

रहा। अन्य इतिहासकारों ने उन्हें 'महाराजा' लिखा है।

महाराजा अहम फ़ैसले श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के दिशा-निर्देशा में लेते थे और गुरु महाराज का प्रकाश हमेशा उनके अंग-संग रहता था, जो उनके अंत समय तक भी रहा। महाराजा अंग्रेज़ों के साथ कुटिल नीति हुए उनके साथ सभ्यक ढंग से पेश आते रहे। वह अंग्रेजों के नापाक इरादों से वाकिफ़ थे, जो अपने साम्राज्य की सीमा अफगानिस्तान तक लाना चाहते थे। इस सम्बन्ध में आज के प्रसिद्ध लेखक सरदार अजमेर सिंघ लिखते हैं कि महाराजा इन नापाक मंसूबों से शुरू से ही वाकिफ़ थे और पंथक सोच रखते हुए अंग्रेज़ों को यमुना तक ही रोक देना चाहते थे, मगर अंग्रेज़ों के इन कुटिल नीति वाले पंथ-विरोधी मंसूबों को रोकने की बजाय, महाराजा रणजीत सिंघ का साथ न देते हुए, सिक्ख कौम के कुछ रजवाड़े, ख़ास कर सतलुज पार मालवा क्षेत्र के, महाराजा के इस कौमी जज़्बे को नुकसान पहुंचाने में पंथ-विरोधी भूमिका निभा रहे थे।

उन्होंने अपनी विजय को सतिगुरु की बख्शिश बताया और राजाओं वाले चिह्न व दस्तूर न अपनाए। वे प्रत्येक विजय के बाद श्री अमृतसर साहिब पहुँचते और प्रत्येक संक्रांति को श्री दरबार साहिब में हाज़िरी अवश्य भरते। उनकी जो भी सम्पत्ति थी, ख़ज़ाना, हीरे-जवाहरात थे, सब लोगों के लिए और देश की उन्नति के लिए थे। उन्होंने न अपने लिए और न ही अपनी औलाद के लिए कोई महल खड़े किए या जो भी बनाए वे कौमी विरासत घोषित किए गए। महाराजा ने ऐसी खालसा फ़ौज खड़ी की, जिसके मात्र तीन ब्रिगेडों (कुल २२ ब्रिगेड) ने फिरोज शाह की लड़ाई के समय अंग्रेज़ साम्राज्य को हिला दिया था और उनकी सारी फ़ौज को एक समय पर हथियार डालने के लिए विवश कर दिया था। गद्दार कमांडरों के कारण खालसा फ़ौज अपनी इस जीत का फ़ायदा न उठा सकी।

महाराजा के दिल में पंथक-प्रेम विद्यमान था, जो कि अपनी कौम के प्रति वफादारी निभाने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करता रहता था। इतिहास में दर्ज है कि उन्होंने सतलुज पार की सिक्ख रियासतों के साथ प्यार का रिश्ता बनाए रखा और इन रियासतों के शासक महाराजा के पारिवारिक समारोहों में उपस्थित होते थे। एक बार लुधियाना स्थित अंग्रेज़ पोलिटिकल सफ़ीर कैप्टन वेड ने महाराजा के साथ हुई मुलाकात के समय कहा कि बेशक आप सतलुज से पार इन रियासतों के राजाओं को इतना आदर-मान देते हो, परन्तु आप पर आई मुश्किल के समय ये लोग अंग्रेज़ सरकार के विरुद्ध आपकी कोई मदद नहीं करेंगे।

ऐसे महाराजा, जो अपनी प्रजा के साथ तन-मन से जुड़े हुए थे, गुरु-घर से कभी विमुख नहीं हुए थे और अपनी हर कामयाबी का श्रेय अपनी पंथक सोच के कारण परमात्मा को ही देते थे। उनकी इसी सोच ने प्रत्येक लड़ाई जीतते हुए ख़ालसा के विजयी होने के सिद्धांत को व्यवहारिक रूप प्रदान किया, जो उनके देहांत के बाद भी एंग्लो-सिक्ख लड़ाइयों तक जारी रहा था। मुदकी की लड़ाई के समय केवल २००० सिक्ख योद्धाओं ने १२००० से अधिक अंग्रेज़ों की फ़ौज के मुँह मोड़ दिए थे, जो कनिंघम, कर्नल मालेसन और जॉर्ज ब्रूस सहित कई इतिहासकारों ने दर्शाया है।

गुरबाणी की भाषा : गुरमुखी

-डॉ. चमकौर सिंघ*

'गुरमुखी' को पंजाबी भाषा की लिपि के तौर पर अक्सर सबने सुना-पढ़ा होगा, परंतु गुरमुखी को भाषा के तौर पर विचारना विचित्र और अटपटा लग सकता है। ऐसा होना स्वाभाविक है, क्योंकि आधुनिक युग में प्राकृतिक रूप से हम बहुसंख्यक वर्ग द्वारा स्वीकृत और प्रमाणित रुझानों को सरलता से ग्रहण किया जाता हैं, इसलिए इस आलेख में प्रस्तुत विचार को धैर्य और सहजता के साथ विचारने-समझने की गुज़ारिश है। यह स्पष्ट रहे कि इस आलेख का उद्देश्य धर्म-शास्त्रीय, साहित्यक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से गुरमुखी भाषा की देश-कालीन विलक्षणता के कुछ छिपे हुए नुक्तों की तरफ ध्यान दिलाना है। गुरमुखी के भाषा-वैज्ञानिक /लिपि-वैज्ञानिक लक्षणों की निशानदेही या पेशकारी, इस अध्ययन का विषय नहीं। निस्संदेह भाषा-विज्ञान सहित अन्य विभिन्न अकादमिक अनुशासनों की दृष्टि से गुरमुखी भाषा के विभिन्न पक्षों को गंभीरता के साथ बैठ कर स्पष्ट करने की ज़रूरत है और इस दिशा में गंभीर खोज-कार्य आवश्यक है।

'गुरमुखी' (गुर+मुखी) का अर्थ है-- गुरु के मुख से उच्चारण की हुई या गुरु के मुख से प्राप्त अथवा निकली हुई। अन्य भावार्थ ये भी हैं-- गुरु की तरफ मुख कर देने वाली गुरु के सम्मुख ले जाने वाली।

'गुरबाणी' (गुर+बाणी) का अर्थ है -- गुरु द्वारा उच्चारण की हुई ध्वनि या आवाज़; गुरु के बोले शब्द, वाक्य, वचन। 'बाणी' के कोशगत अर्थ हैं-- वाक्य-शक्ति, बोल-शक्ति, बातचीत, बोली, भाषा, ज़ुबान, आवाज़, ध्वनि आदि।

इस प्रकार गुरमुखी और गुरबाणी, दोनों शब्द आपस में ओतप्रोत और एकसुर हैं। दोनों के अर्थों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। गुरु के मुख से बोली गई ध्वनि, शिक्षा गुरबाणी रूप में हमारे सम्मुख है। गुरबाणी का एक-एक वाक्य, गुरु की मति के साथ संजोया हुआ है। गुरु की मति सिखाने वाले ये पवित्र गुरवाक अर्थात् शिक्षा-वचन, शबद-गुरु के रूप में हाजिरा-हजूर, जाहिरा-जहूर सतिगुरु हैं। गुरु की रसना द्वारा बोली गई प्रत्येक शब्द-ध्वनि, गुरबाणी रूप में प्रत्येक सिक्ख के लिए शाश्वत मार्गदर्शक है। गुरु की यह शिक्षा गुरमुखी (भाषा और लिपि) में

*निदेशक, पंथ-रत्न जत्थेदार गुरचरन सिंघ टौहड़ा इंस्टीट्यूट ऑफ अडवांस्ड स्ट्डीज़ इन सिक्खिज़म, बहादुरगढ़ पटियाला)—१४७०२१, फोन : ९४१७९-३५४७४

सज्जित होकर हमारे तक पहुँची है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समूची बाणी का पवित्र पाठ, भाषाई संरचना के पक्ष से विभिन्नताओं के मिश्रण का विचित्र मुजस्समा है। धार्मिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-विचारधारक विलक्षणताओं को रूहानी संवेदना, परमार्थी अभेदता और विस्मयकारी रिश्ते के सूत्र में पिरोने के लिए गुरबाणी के पवित्र पाठ में भाषाई विभिन्नताएं, सद्भावना-भरपूर सह-अस्तित्व रचना-योजना के अधीन संगठित हुई हैं। विषय-वस्तु, समय-स्थान, परिस्थिति, संस्कृति, आत्मिक-मानसिक भाव-दशा, काव्यरूप और सम्बन्धित राग की भाव-प्रकृति के अनुकूल भाषा व शब्दावली का इस्तेमाल, गुरबाणी के विलक्षण भाषाई प्रबंध को बाखूबी रूपमान करता है।

गुरबाणी का भाषाई कलेवर, इसके उच्चारणकर्त्ताओं के जीवन-काल की दृष्टि से पाँच सदियों (बारहवीं से सत्रहवीं सदी) तक और मातृ-भूमि/ कर्म-भूमि के पक्ष से दक्षिणी एशिया उपमहाद्वीप के विशाल भौगोलिक क्षेत्र में फैला हुआ है। कालगत और स्थानगत दोनों पक्षों से गुरबाणी की भाषा का प्रत्यक्षी भाषा-वैज्ञानियों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से किया है। विभिन्न भाषा विशेषज्ञों द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की भाषा की शिनाख़्त के अनेक लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं, जिनमें गुरबाणी की भाषा का नामकरण 'पुरातन/पुरानी पंजाबी'[१] 'लोक-भाषा'[२] 'संत-भाषा'[३] 'सधुक्कड़ी'[४] 'गुरभाषा'[५] 'गुरू-भाषा'[६] 'श्री गुरु ग्रंथ भाषा'[७] सिक्खों की पवित्र भाषा (Sacred Language Of the Sikhs)[८] 'मिश्रिरत भाषा'[९] 'साझी भाषा' 'साझी साहित्यक भाषा'[१०] 'संपर्क भाषा', 'देश-भाषा', 'सर्वदेशी भाषा' आदि विभिन्न संकल्पों के अंतर्गत हुआ है। प्रिंसिपल तेजा सिंघ, प्रो. साहिब सिंघ डॉ. काला सिंघ (बेदी) आदि विद्वानों ने गुरबाणी की भाषा को पंजाबी बताया है। डॉक्टर लाईटनर, जो पंजाब के शिक्षा विभाग के निदेशक थे तथा बाल गंगाधर तिलक आदि ने पंजाबी बोली को 'गुरमुखी' नाम से ही याद किया है।[११] गुरबाणी-भाषा की अध्ययन-परंपरा में इसके भाषाई स्वरूप की पहचान पहले अधिकांशत: 'पुरातन पंजाबी' और 'साध भाषा' या 'सधुक्कड़ी भाषा' के तौर पर होती रही है, जबकि इसकी भाषाई विविधता के मद्देनज़र कई विद्वान इसके बहुभाषायी स्वरूप का 'मिश्रिरत भाषा' के तौर पर संकल्प करते रहे हैं और कुछ विद्वानों को गुरबाणी की भाषा में से बहुभाषावाद (Multiligualism) की झलक नज़र आती है। डॉ. प्रेम प्रकाश सिंघ ने गुरबाणी के भाषाई स्वरूप को निखारने अथवा सृजित करने में तीन प्रकार की भाषाई परंपराओं के योगदान का वर्णन किया है।[१२]

पहली, गुरबाणी भाषा की बुनियाद में अपने समकालीन पंजाब की प्रचलित पंजाबी बोली

की स्थापना हुई है, जिसमें आस-पड़ोस के भाषाई समाज की जीवंत बोलियों के अंश बड़ी व्यापकता के साथ आत्मसात हुए हैं। पंजाब की पुरातन और मध्यकालीन भाषा-परंपरा, जिसके माध्यम से पूरबी और पश्चिमी पंजाब की समूह पंजाबी उपभाषाओं का संगम, गुरबाणी के पाठ में एक प्रबंधशील साहित्यक पंजाबी भाषा के स्वरूप को निखारता है। गुरबाणी की भाषा के बुनियादी तल पर यही प्रबंधशील भाषाई स्वरूप कार्यशील रहता है।

दूसरी भाषा-परंपरा के माध्यम से गुरबाणी की भाषा में समूचे उत्तरी भारत की तत्कालीन साहित्यक बोलियां और शैलियां जज़्ब होने से नवीन भाषा-सृजन का कार्य शुरू होता है। अपने-अपने क्षेत्रीय और स्थानीय मुहावरे तथा व्याकरणिक प्रयोगों को साथ लेकर एक नवीन और साझा भाषाई मुहावरा विकसित हुआ। डॉ. प्रेम प्रकाश सिंघ ने उसे 'उत्तरी भारत की सरबसांझी साहित्यक भाषा'[१३] (Lingua Franca) के पंजाबी संस्करण के रूप में पहचाना है, जिसकी भाषाई विविधता/ मिश्रण में से 'बहुभाषावाद' की झलक नज़र आती है। इसमें तत्कालीन पंजाबी की समूह भाषाई किस्मों के अलावा सिंधी, बांगरू (हरियाणवी), राजस्थानी, व्रज, खड़ी बोली, हिन्दवी, बिहारी, मराठी, सधुक्कड़ी, रेख़ता, सहसक्रिती, गाथा और पश्चिमी पहाड़ी बोलियों के अंश शामिल हैं।

तीसरी भाषा-परंपरा, गुरबाणी युग से पूर्वी प्राकृत और अपभ्रंष भाषाओं की परंपरा है जिसमें पंजाब की मद्र, कैकई, टक्क, शौरसेनी आदि सहित प्राकृतों और अपभ्रंषों के पुरालेखी भाषाई अंश, गुरबाणी की भाषा में मौजूद हैं। गुरबाणी की भाषा के शब्दों के अंत में लगा-मात्रा (विशेषकर 'सिहारी' तथा 'औंकुड़') और -हि, - तिह, - तिस आदि जो फालतू प्रतीत होते अक्षर इस्तेमाल किए गए हैं, ये फालतू नहीं, बल्कि ये तो शब्दों के साथ जुड़ने वाले ज़रूरी विभक्ति-चिन्ह[१४] अथवा कारकी पिछेतर हैं। ये विभक्ति-चिन्ह अथवा पिछेतर, प्राकृत और अपभ्रंष भाषाओं के बकाया अंश हैं।

एक और भाषा परंपरा (डॉ. प्रेम प्रकाश सिंघ के उक्त आलेख में इसका अलग से वर्णन नहीं है), वो है अरबी, फ़ारसी, तुर्की आदि सामी भाषाओं की शब्दावली का गुरबाणी की भाषा में दाख़िल होना। अरबी, सामी भाषा-परिवार की एक प्रमुख भाषा है जो कुरान शरीफ़ की भाषा होने के कारण इसलाम के प्रसार के साथ ही एशिया और उत्तरी अफ्रीका के बड़े क्षेत्र में फैल रही थी। फ़ारसी उस समय एशिया के बड़े क्षेत्र में संपर्क भाषा के रूप में शाही दरबारों एवं व्यापारिक काफ़िलों की भाषा के तौर पर प्रचलित थी। मुसलमान हमलावरों और व्यापारियों के माध्यम से बारहवीं-तेरहवीं सदी में यह भाषा हिंदुस्तान में

दाख़िल हुई और भारतीय भाषाओं, विशेषत: पंजाबी को अधिक प्रभावित किया। गुरबाणी में इन भाषाओं की शब्दावली को खुलदिली के साथ स्वाभाविक रूप से स्वीकृति प्राप्त हुई है।

इस प्रकार दक्षिणी और पश्चिमी एशिया की नाना प्रकार की प्राचीन-मध्यकालीन भाषाओं ने घुल-मिल कर गुरबाणी की भाषा-शैली और भाषाई शब्दावली में अपना गौरवशाली स्थान बनाया हुआ है।

भाई वीर सिंघ ने गुरबाणी की भाषा को 'श्री गुरु ग्रंथ भाषा' का नाम देते हुए लिखा है: -

''अपभ्रंष के बाद जो हिंदुस्तान की एक भाषा हुई है, वो है-- 'श्री गुरु ग्रंथ भाषा'। अभी इस भाषा के लिए किसी विद्वान ने कोई ख़ास नाम नहीं पेश किया।''

वे आगे लिखते हैं :-

''यह भाषा मात्र पंजाब की नहीं, यह उस समय पूरे हिंद की भाषा थी। भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त पीपा जी, भक्त धंना जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त जैदेउ जी, भक्त रामानंद जी, भक्त नामदेव जी के शब्दों की भाषा यही है। चाहे इस एक जैसी भाषा में थोड़ा बहुत अंतर है, जो प्राकृतिक रूप से होता ही है, उसे छोड़ कर साधारण भाषा वही है और यह पंजाबी के साथ बहुत मिलती-जुलती है। . . . यह पंजाबी भाषा है या इसे कोई अन्य नाम दे लें, परन्तु उस साहित्यक घटना में फर्क नहीं पड़ेगा कि यह भाषा एक समय में पूरे उत्तरी हिंदुस्तान की साझी भाषा थी।''[१५]

गुरबाणी की भाषा, दक्षिणी एशिया के विशाल भौगोलिक क्षेत्र में अफगानिस्तान-सिंध से लेकर बंगाल तक और कश्मीर से लेकर महाराष्ट्र तक, बोली और समझी जाने वाली अनेक मध्यकालीन भाषाओं का सामूहिक संस्करण है। गुरबाणी की भाषा के बारे में मध्यकालीन उत्तरी और मध्य भारत के विशाल भू-खंड की 'साझी साहित्यक भाषा' (Lingua Franca) के रूप में पहचानने का यह जो पृथक परिप्रेक्ष्य बनता है, भाषा- वैज्ञानिक दृष्टि से वह गुरबाणी भाषा के प्रत्यक्षीकरण के अब तक हुए अध्ययनों में से ज्यादा प्रमाणिक और स्वीकार करने योग्य प्रतीत होता है। बहुभाषावाद की झलक प्रदान करने वाली पवित्र गुरबाणी में विभिन्न भाषाई नमूनों के मौजूद अंश इस तथ्य की भली-भांति पुष्टि करते हैं। चाहे इस भाषा के नामकरण का मसला जैसे का वैसा चला आ रहा है, परंतु गुरबाणी के संदर्भ में इसे 'गुरमुखी' नाम से ग्रहण करना हर पक्ष से उचित है।

'गुरमुखी' शब्द, आज उस लिपि के लिए रूढ़ हो चुका है, जिसमें आज केवल पंजाबी भाषा लिखी जाती है। सबसे पहले इस लिपि का प्रयोग श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी लिखने के लिए हुआ है, जिसमें गुरु साहिबान, भक्त साहिबान, भट्ट साहिबान और गुरसिक्खों की बाणी दर्ज है। इस महान धर्म-ग्रंथ की लिपि भी

गुरमुखी है और भाषा भी गुरमुखी। श्री दसम ग्रंथ साहिब, भाई गुरदास जी और भाई नंद लाल जी की गुरमुखी-रचना, हुकमनामे, रहितनामे, जन्मसाखियां, गुर सोभा, गुरबिलास, महिमा प्रकाश, पंथ प्रकाश, सूरज प्रकाश सहित अनेक ग्रंथों की भाषा व लिपि, दोनों ही गुरमुखी हैं। वास्तव में गुरमुखी लिपि, गुरमुखी भाषा की ही लिपि है।

लिपि और भाषा के संकल्प को अलग-अलग देखने और समझने का आधुनिक रुझान, मध्य काल में वर्तमान की तरह अलग-अलग कर संकल्पना नहीं है। जन्मसाखियों तथा अन्य रचनायों, जैसे (बाबा श्रीचंद जी के मात्रे आदि) में गुरमुखी पद का प्रयोग भाषा तथा लिपि दोनों धारणाओं के लिए सामूहिक रूप से किया गया है।[१६] प्रो. पिआरा सिंघ पदम के अनुसार ''भक्ति लहर के समय परमार्थ मार्ग के पथिक योगी, नाथ, साधु, संत हिंद भर में एक सामूहिक भाषा का इस्तेमाल किया करते थे और उसे 'संत भाषा' या 'सधुक्कड़ी' कहा करते थे। बाबा श्रीचंद जी ने 'जगत का टोप गुरमुखी बोली' इसे ही कहा है।'' [१७] बेशक विद्वानों ने गुरबाणी की भाषा को सधुक्कड़ी, साधभाषा, हिन्दवी, हिंदुस्तानी, पुरातन पंजाबी, मध्यकालीन पंजाबी, अनेक तरह की शब्दावली के साथ सम्मानित किया है, परंतु गुरबाणी की भाषा को गुरमुखी के अलावा किसी अन्य नाम से संबोधित करना, इसके मूल स्वरूप अथवा प्रकृति को नजरअंदाज करना है। वास्तव में गुरबाणी की भाषा गुरमुखी है।

गुरबाणी, सिक्ख के लिए गुरु का दर्जा रखती है- ''बाणी गुरु गुरु है बाणी...॥'' दसम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा नांदेड़ (महाराष्ट्र) में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को मर्यादा सहित गुरुआई सौंप कर इस धारणा को सदैव के लिए प्रमाणित कर दिया। भक्त साहिबान और भट्ट साहिबान की बाणी सहित श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समूह बाणी ही अब गुरु का दर्जा रखती है, जिसके पठन-पाठन की एक लम्बी परंपरा है। गुरुआई-दृष्टि से भी गुरु- स्वरूप श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पवित्र पाठ अथवा बाणी की भाषा (बोली) के लिए 'गुरमुखी' नामकरण बिलकुल उपयुक्त और प्रमाणिक है।

गुरमुखी (लिपि और भाषा) का भौगोलिक और सांस्कृतिक दायरा बहुत विशाल रहा है। एक समय था जब गुरमुखी (भारत और पाकिस्तान सहित) दक्षिणी एशिया उप-महाद्वीप के विशाल क्षेत्र में सामूहिक संपर्क भाषा के तौर पर उच्च स्तर पर प्रचलित थी। गुरु साहिबान, सिक्ख मिसलों/रियासतों और महाराजा रणजीत सिंघ के सिक्ख राज की पुशतपनाही के कारण गुरमुखी ने दूर-दूर तक विकास किया था। उदासी, निरमले, सेवापंथी आदि गुरमुखों-महापुरुषों के प्रयत्नस्वरूप

अफगानिस्तान से बिहार-बंगाल और कश्मीर से सिंध-महाराष्ट्र तक छोटे-बड़े गुरमुखी विद्यालयों-पाठशालाओं का जाल बिछा हुआ था। इस विशाल क्षेत्र में व्यापक रूप से प्रचलित भाषा में रचित मध्यकालीन साहित्य बड़ी मात्रा में गुरमुखी लिपि में लिखा हुआ मिलता है। यह वो समय था जब उत्तरी भारतीय महाद्वीप के कवियों और लेखकों की बड़ी संख्या गुरमुखी में लिखने में फख्र महसूस करती थी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबार के सैकड़ों कवियों, लेखकों और विद्वानों की गुरमुखी रचनायें इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब सहित सैकड़ों पुरातन ग्रंथों की अनेक प्रतिलिपियां इस तथ्य को भली-भांति प्रमाणित करती हैं। यह बात अलग है कि पिछली लगभग एक सदी से इस कीमती सम्पदा का बड़ा भाग लापरवाही, अल्पज्ञता, साजिश आदि विभिन्न कारणों से तबाह अथवा नष्ट हो चुका है।

वर्तमान समय में गुरबाणी के उच्चारण (Articulation) और लिप्यंतरण (Transliteration) के साथ जुड़े हुए बहुप्रकारी विवादी सरोकारों का एक बड़ा कारण, गुरबाणी की भाषा के प्रति अल्पज्ञ धारणाओं का स्थापित हो जाना है। एक धारणा, इसकी भाषा को केवल वर्तमान पंजाबी तसव्वुर कर लेना है। गुरबाणी की भाषा के प्रति जाने-अनजाने में अपनाई जा रही इस धारणा के पैरोकार, गुरबाणी के उच्चारण को वर्तमान पंजाबी की भांति उच्चारण करने की तरफ रुचित अथवा हठी हैं। गुरबाणी का लिप्यंतरण करने वाले अधिकांशतः लिप्यंतरणकार भी, जब मूलपाठ या उसके मूल गुरमुखी उच्चारण की जगह आधुनिक पंजाबी उच्चारण को लिप्यंतरण का आधार बनाते हैं तो गुरबाणी पाठ के भिन्न-भिन्न संस्करणों का अस्तित्व में आना स्वाभाविक है। गुरबाणी भाषा के मूल गुरमुखी स्वरूप की समझ से विहीन होने के कारण उक्त धारणा, गुरबाणी के उच्चारण और लिप्यंतरण के प्रति अनेक प्रकारी मिथ्यार्थ और भ्रांतियां पैदा करने की वजह बन रही है, जिस कारण गुरबाणी के नए-नए पाठ अस्तित्व में आ रहे हैं।

गुरबाणी, धुर की अकाली बाणी है। यह गुरु के मुखारविंद से उच्चरित पवित्र बोल हैं, जो गुरमुखी में लिखे गए हैं। इस प्रकार गुरमुखी, गुरु के मुखारविंद से उच्चारण की हुई रूहानियत से प्रफुल्लित विस्मयकारी भाषा है, जो सरबत्त के भले के साथ संयुक्त है। गुरमुखी ईश्वरीय प्रेम और ईश्वरीय कृपा से शराबोर सर्वसाझी भाषा है, जो विभिन्न क्षेत्रों के विभिन्न भाईचारों के मध्य घनिष्ठता के संपर्क-सूत्र की सूचक है।

१. गुरमुखी, ईश्वरीय प्रेम और भक्ति- भाव के संचार-इज़हार की भाषा है।

२. गुरमुखी, रूह के उल्लास अर्थात् आत्म-

विगास और परगास की भाषा है।

३. यह जीवन संवारने वाली सर्व-कल्याणकारी और मुक्तिदाता प्रकृति वाली भाषा है, जो मौलिक, अद्वितीय एवं निराली है।

४. गुरमुखी, ईश्वरीय स्वभाव के अनुकूल होने के कारण विस्मयकारी स्वभाव की मालिक है, ग़ैर-सांप्रदायिक है।

५. गुरमुखी, कुदरत के स्वभाव के अनुकूल होने के कारण सबको साथ लेकर और सबके साथ होकर चलने का सामर्थ्य रखती है।

६. गुरमुखी, सभी भाषाओं-भाईचारों के साथ संवाद रचाने और घनिष्ठ सम्बंधों को मज़बूत करने वाली भाषा है।

७. प्रभु-गुणों से भरपूर यह भाषा, ईश्वर के सभी नामों-रूपों को अपने में समोये बैठी है, जिसने धार्मिक विभिन्नताओं के बीच भाईचारक घनिष्ठता और एकात्मकता को सृजित और प्रफुल्लित किया है।

८. गुरमुखी का हाज़मा लाजवाब है, जिसने दक्षिणी और पश्चिमी एशिया की अनेकप्रकारी भाषाओं-उपभाषाओं के शब्दों को आसानी के साथ अपने अंदर समोया है, जज़्ब किया हुआ है।

९. गुरमुखी नाना प्रकार की भाषा-उपभाषा बोलने वाले लोगों के मध्य साझा सूत्र बनी है। इसने विभिन्न प्रकारी भाषाओं-उपभाषाओं की शब्दावली एवं भाषा-शैलियों को संजो कर एक बड़े भौगोलिक दायरे में अपने आप को सर्वसाझी महाभाषा के तौर पर स्थापित किया है।

१०. यह आज भी संसार के प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक व्यवसाय, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक धर्म, प्रत्येक सभ्यता, प्रत्येक संस्कृति के लोगों के बीच आपसी निकटता के तानेबाने को मज़बूती के साथ जोड़ने के सामर्थ्य से भरपूर है।

गुरबाणी की भाषा 'गुरमुखी' में विभिन्न धर्मों, धर्म-पंथों, सभ्यताओं-सभ्याचारों, कबीलों, भाईचारों से सम्बन्धित शब्दावली मौजूद है। इस भाषा में विभिन्न क्षेत्रों-देशों, भाषाओं-उपभाषाओं, व्यवसाय से सम्बन्धित शब्दावली मौजूद है। गुरमुखी, किसी ख़ास क्षेत्र, पेशे या वर्ग की भाषा नहीं है। यह आज की पंजाबी, हिंदी, सिंधी, हिंदुस्तानी या उर्दू, सबसे न्यारी, विलक्षण और मूलक भाषा है। यह कहना भी उचित होगा कि गुरमुखी इन सब भाषाओं की जननी है। अपभ्रंषों के बाद आधुनिक भाषाओं के विकसित होने से पहले का पड़ाव 'गुरमुखी' का है। कहने से तात्पर्य, प्राकृतों से अपभ्रंषों की विकास-यात्रा के बाद उत्तरी भारत की आधुनिक भाषाओं के विकास का सफ़र, गुरमुखी के दौर (१२००- १७०० ईस्वी) से होकर गुज़रा है। जाति, मजहबी, क्षेत्रीय, भाषाई संकीर्ण डब्बेबन्दियों से मुक्त होकर गुरमुखी भाषा को विशाल दृष्टिकोण के साथ समझना, व्याख्यायित करना, पेश करना वर्तमान समय की बड़ी ज़रूरत है। ऐसा करने

में अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के हल अर्थात् सरबत्त का भला छिपा हुआ है।

गुरबाणी की भाषा 'गुरमुखी' की भाषाई और व्याकरणिक विशेषताओं की सीमा-रेखा एक अलग भाषा-वैज्ञानिक विषय अथवा सरोकार है, जिसके बारे में अलग-अलग विचार हो सकते हैं, परंतु इसके 'गुरमुखी' नामकरण के बारे में विवाद की कोई गुंजाईश नहीं हो सकती। इस नाम को निर्विवाद स्वीकार करना बनता है। आज पंजाब या देश-विदेश के किसी शैक्षिक अथवा अकादमिक अदारे में गुरमुखी के अध्ययन-अध्यापन की कोई पृथक या विलक्षण परंपरा नज़र नहीं आती। पंजाबी विषय या विभागों के अंतर्गत जो पंजाबी का अध्ययन- अध्यापन हो रहा है, उसमें से गुरमुखी की मौलिक विलक्षणताएं-विशेषताएं गायब हैं। पंजाबी विषय के पाठ्यक्रमों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पवित्र बाणी सहित अन्य प्राचीन गुरमुखी ग्रंथों की पढ़ाई नामात्र रह गई है। यह भी गंभीरता के साथ विचारे जाने की ज़रूरत है।

संदर्भिका :—

१. मोहण सिंघ (डॉ.), पंजाबी भाषा और छन्दाबन्दी, ओरिएंटल कॉलेज, लाहौर, १९३७.

२. हरबंस सिंघ, गुरु नानक देव जी की काव्य-कला, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, २००३, २८६- २८७.

३. (अ) मनमोहन सहगल (डॉ.), गुरु ग्रंथ साहिब : एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण, भाषा विभाग, पंजाब, १९८७, पृष्ठ ११९.
(आ) पिआरा सिंघ पद्म (प्रो.), श्री गुरु ग्रंथ प्रकाश, सिंघ ब्रादर्स, श्री अमृतसर, तीसरी बार, २००४.

४. नवरत्न कपूर (डॉ.), श्री गुरु ग्रंथ साहिब : विभिन्न परिप्रेक्ष्य, (संपा.) डॉ. जसबीर कौर, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, २००५, पृष्ठ १०४.

५. उजागर सिंघ (डॉ.), गुरु नानक देव जी की भाषा, परख, अंक- २, १९७०, पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़।

६. (अ) हरकीरत सिंघ (डॉ.), गुरबाणी की भाषा और व्याकरण, १९९७, पृष्ठ ३६.
(आ) प्रेम प्रकाश सिंघ (डॉ.), गुरु नानक और निर्गुणधारा, भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला, १९७३, पृष्ठ ३३८.

७. भाई वीर सिंघ, पंजाबी साहित दा इतिहास, भाग प्रथम, (संपा. सुरिंदर सिंघ कोहली), पंजाब यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन ब्यूरो, चंडीगढ़, द्वितीय संस्करण, १९९२, पृष्ठ ५६.

८. Christopher Shackle, An Introduction to the Sacred Language of the Sikhs, University of London, Second Edition, 1986, preface.

९. कृष्ण लाल शर्मा और नरिंदर कौर भाटिया (संपा.), बाणी-बिलास, गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, श्री अमृतसर, १९८२, पृष्ठ ५४.

१०. प्रेम प्रकाश सिंघ (डॉ.), रूप विज्ञान और पंजाबी शब्द-रचना, २००२, पृष्ठ १५७- १५८.

११. प्रो. पिआरा सिंघ पद्म, पंजाबी बोली दा इतिहास (१९९५), पृष्ठ १३५.

१२. प्रेम प्रकाश सिंघ (डॉ.), रूप विज्ञान और पंजाबी शब्द-रचना, पृष्ठ १५७- १५८.

१३. उपरोक्त।

१४. कृष्ण लाल शर्मा और नरिंदर कौर भाटिया, बाणी-बिलास, पृष्ठ २६.

१५. सुरिंदर सिंघ कोहली (संपा.), पंजाबी साहित दा इतिहास, भाग प्रथम, पृष्ठ ६२- ६३.

१६. प्रो. पिआरा सिंघ पद्म, सिक्ख सम्प्रदावली (२०००), पृष्ठ ४३.

१७. प्रो. पिआरा सिंघ पद्म, गुरमुखी लिपि दा इतिहास (२०००), पृष्ठ ५६.

भाई वीर सिंघ की रचनाओं के अनुसार गुरमति-मार्ग

-डॉ. परमजीत कौर*

गुरमति के अनुसार जीवन बनाकर परमात्मा के नाम का सिमरन करना ही सफल जीवन का आधार है। जिंदगी व्यर्थ गंवाने के लिए नहीं होती। किसी को नहीं मालूम कि उसका जीवन कितना है। व्यर्थ बीत गया समय कभी वापिस नहीं आता, चाहे मनुष्य कितना भी यत्न करता रहे, इसलिए हर पल को नाम-सिमरन में लगाकर सफल करना जीव का धर्म है, कर्त्तव्य है :

गुन गुपाल न जपहि रसना
फिरि कदहु से दिह आवहे।।
तरवर विछुंने नह पात जुड़ते
जम मगि गउनु इकेली।।
बिनवंत नानक बिनु नाम हरि के
सदा फिरत दुहेली।। (पन्ना ५४६)

अपनी सारी आयु धन एकत्र करने के उद्यम में, झूठी मान-प्रतिष्ठा की प्राप्ति के चक्कर में, मोह, भ्रम तथा भटकन में गंवा देने वाले का जीवन व्यर्थ हो जाता है। जिस मनुष्य ने सतिगुरु की शरण नहीं ली, जिसके हृदय में नाम का निवास नहीं हुआ, जिसका परमात्मा के साथ प्रेम नहीं है, उसके जीवन को धिक्कार है। गुरु साहिबान के अनुसार :

— सतिगुर सिउ चितु न लाइओ
नामु न वसिओ मनि आइ।।
ध्रिगु इवेहा जीविआ
किआ जुग महि पाइआ आइ।। (पन्ना ५१०)
— ध्रिगु इवेहा जीवणा जितु हरि प्रीति न पाइ।।
जितु कंमि हरि वीसरै दूजै लगै जाइ।।
(पन्ना ४९०)
— नामहीन ध्रिगु जीवते तिन वड दूख सहंमा।।
ओइ फिरि फिरि जोनि
भवाईअहि मंदभागी मूड़ अकरमा।।
(पन्ना ७९९)

ऐसे जीव जीवित रहते हुए भी मृतक के समान हैं :

सतिगुर की सेव न कीनीआ
हरि नामि न लगो पिआरु।।
मत तुम जाणहु ओइ जीवदे
ओइ आपि मारे करतारि।। (पन्ना ५८९)

गुरु की शरण में आए बिना प्रभु-दर प्राप्त नहीं होता, प्रभु का नाम प्राप्त नहीं होता। गुरु के सिक्खों के लिए गुरबाणी ही गुरु है। गुरु की शरण में आने का भाव है- गुरु के उपदेश को मन में धारण करना। भाई साहिब भाई वीर सिंघ समझाते हैं कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शरण लें! भरोसा करें कि यही साक्षात गुरु है! (पिआरे जीउ, पृष्ठ ८५)

गुरु की शरण में आकर ही नाम-प्राप्ति के मार्ग पर चल सकते हैं :

— गुरबाणी वरती जग अंतरि
इसु बाणी ते हरि नामु पाइदा।। (पन्ना १०६६)
— गुरि कहिआ सा कार कमावहु।।

*६२०, गली नं. १, छोटी लाईन, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)। फोन : ९८१२३-५८१८६

गुर की करणी काहे धावहु।।
नानक गुरमति साचि समावहु।।(पन्ना ९३३)

जो गुरु जी के वचनों को नहीं मानता, मन में नहीं बसाता, वह मानों गुरु के सम्मुख पीठ कर लेता है, दुखी रहता है, परमात्मा की कृपा का पात्र नहीं बनता, परमात्मा उसके अंदर प्रकट नहीं होता, चाहे वह मुख से परमात्मा के नाम का उच्चारण करता रहे :

— गुर ते मुहु फेरे जे कोई
गुर का कहिआ न चिति धरै।।
करि आचार बहु संपउ संचै
जो किछु करै सु नरकि परै।। (पन्ना १३३४)

गुरबाणी प्रेम सहित पढ़नी चाहिए तथा मन में पूर्ण भरोसा होना चाहिए कि परमात्मा सर्वव्यापक है, हमेशा हमारे साथ है। भाई साहिब भाई वीर सिंघ के अनुसार गुरबाणी को पढ़ते समय कभी एक क्षण के लिए भी यह न भूलें कि वाहिगुरु प्यारा हमारी बाणी सुन रहा है। यह भरोसा हृदय में उस प्यारे के साथ प्रेम पैदा करता है। (पिआरे जीउ , पृष्ठ ८५-८६)

भाई वीर सिंघ विस्तार के साथ बड़े ही सरल शब्दों में समझा रहे हैं- ''प्रभु तेरे अंदर है। वह सर्वव्यापक है। एक देशीय नहीं, वह सर्वदेशीय है, तेरे समीप है, अंदर है, हाजरा हजूर है। उस पर भरोसा रखो! जब उसके अस्तित्व पर भरोसा हो गया तो फिर उसको याद रखो! यदि यह बात भूल गई कि वो अंदर है, तो फिर वियोग हो गया। वो है, वो मेरा प्यारा है, यह बात अंदर टिकी रहे। इस प्रकार परमात्मा की हजूरी में रहो! फिर जो कुछ भी हो उसका किया समझो! उसको भला करके मानो! जब ऐसा दृढ़ निश्चय हो जाएगा, अवगुण दूर हो जाएंगे, अहं दूर हो जाएगा। (गुरु नानक चमत्कार, भाग-१, पृष्ठ ३२२-३२३)

गुरमति के अनुसार प्रभु-प्राप्ति के मार्ग पर चलने के लिए, गृहस्थ में रहते हुए, अपने कर्त्तव्यों को पूरा करते हुए नाम-सिमरन करना है! घर के प्रति अपने उत्तरदायित्व को पूरी तरह से निभाना है! भाई वीर सिंघ का कथन है- ''सिक्ख दिन में गृहस्थी, रात को सन्यासी है। रात में जब सारा परिवार सो जाए तो स्वयं बैठ जाए, 'सोहिला साहिब' का पाठ करके नाम-सिमरन शुरू करे तथा करता रहे। जब नींद आ जाए तो सो जाए तथा जब जागे, यदि नाम जारी रहे तो समझे कि नींद में भी नाम जारी रहा है।'' (पिआरे जीउ, पृष्ठ १३१)

गुरबाणी का पाठ, गुण-कीर्तन, नाम-जाप, सिमरन तथा ध्यान ये सीढ़ियां हैं, जो नाम को अंदर बसाने में सहायक होती हैं। गुरबाणी का पाठ करना, सुनना तथा गुरबाणी द्वारा प्रभु का गुण-गायन करना नाम-सिमरन का पहला चरण है। श्री गुरु नानक देव जी समझा रहे हैं कि हे मन! प्रेम के साथ-प्रभु के गुण गाता रह, गुण तेरे अंदर बस जाएंगे। बार-बार गुण-कीर्तन करने से परमात्मा के साथ प्रेम हो जाता है। गुरु के शबद की बरकत से तेरे अंदर आत्मिक जीवन के ज्ञान का प्रकाश हो जाएगा और तू काम, क्रोध आदि पर विजय प्राप्त कर लेगा :

— ए मन मेरिआ गुण गावहि
सहजि समावही राम।।
गुण गाइ राम रसाइ रसीअहि
गुर गिआन अंजनु सारहे।।

त्रै लोक दीपकु सबदि
चानणु पंच दूत संघारहे।। (पन्ना १११३)
— सिफती गंढु पवै दरबारि।। (पन्ना १४३)

नाम-जाप सिमरन का दूसरा चरण है। पहले रसना द्वारा नाम जपना है :

— आठ पहर जिहवे आराधि।।
पारब्रहम ठाकुर आगाधि।। (पन्ना १८०)
— उचरंति नानक हरि हरि रसना
सरब पाप बिमुचते।। (पन्ना ७०६)

रसना द्वारा जाप करते समय कई बार मन टिकता नहीं, दौड़ता रहता है। भाई वीर सिंघ कहते हैं कि यदि मन स्थिर न रहे, भटकता रहे, तो भी नाम जपना, बाणी पढ़नी छोड़नी नहीं है, लगे रहना है :

लग्गा रहें तां लग्गा रहु, गर दम कदी न डोल।
लग्गा रहे तां लाख का, हटें तां कउडी मोल।
(पिआरे जीउ, पृष्ठ ३४)

रसना द्वारा जपते-जपते जब ध्यान स्थिर हो जाता है तो अपने आप आवाज धीमी हो जाती है। अभ्यास द्वारा धीरे-धीरे नाम अंदर बस जाता है तथा रसना शांत हो जाती है। अब मन जपता है :

— मेरे मन जपि हरि हरि नामु मने।।
(पन्ना ९७६)
— जपि जगदीसु जपउ मन माहा।।
(पन्ना ६९९)

मन में जपते-जपते जब अंदर जाप का प्रवाह चल पड़ता है, बिना उद्यम किए अपने आप अंदर जाप होता रहता है, तो इसको 'अजपा-जाप' कहा जाता है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी 'अजपा-जाप' के बारे में बताते हैं :

आतम उपदेस भेसु संजम को
जापु सु अजपा जापै।।
(रामकली पात : १०)

जब 'अजपा-जाप' की अवस्था लगातार बनी रहे तो यह सिमरन बन जाता है या यह कह सकते हैं कि नाम जपते-जपते जिसका नाम जपते हैं, उस (प्रभु) के साथ प्रेम हो जाए तो जाप सिमरन बन जाता है। हृदय में प्रभु-प्रेम न हो तो परमात्मा को हृदय में नहीं बसाया जा सकता। भाई वीर सिंघ ताकीद कर रहे हैं कि प्रीतम जी से प्रेम करो! अंदर बसाओ!

जा तू अंदरि ता सुखे तूं निमाणी माणीआ।।
(पन्ना ७६१)

रसना द्वारा नाम जपने से लेकर सिमरन की इस प्रक्रिया को भाई साहिब भाई वीर सिंघ संक्षेप में बहुत ही सुंदर ढंग से समझा रहे हैं :-

''वाहिगुरु अंदर है, हमारे समीप है। इस बात को कभी भूलना नहीं है। यदि मन इस याद को सांसारिक बातों में लिप्त कर दे तो रसना पर परमेश्वर का नाम बसाओ! रसना जप करे नाम का, मन अपने को लगाए साँई पर, उसके प्रेम, उसके गुणों पर उसके स्वरूप पर। मन का यह कर्म नाम-सिमरन है। यह अविनाशी की पूजा है। अविनाशी की पूजा निरंकार की पूजा है। निरंकार जिसका रूप-रंग कुछ नहीं है, का जब ध्यान लगता है, तब निश्चय दृढ़ होता है कि वो है तथा यह उसकी 'है' को मन में पक्का किया जाता है- उसका नाम-सिमरन कर तथा सिमरन के घर जाते हैं- नाम जप कर। नाम का जाप करने से मन में

सिमरन होता है– नाम का तथा मन के सिमरन से जीव प्रभु के साथ जुड़ा रहता है। इस प्रकार नाम जपने वाला नामी निरंकार के साथ मिला रहता है। इस मेल में फिर रस आता है, आनंद मिलता है। सिमरन है– सेवा, पूजा, प्रेम, उस निरंकार अविनाशी का।'' (गुरू नानक चमत्कार, भाग–१, पृष्ठ ३२४)

''काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, झूठ बोलना, फीका बोलना, निंदा की आदत, अधिक बोलना, अधिक खाना तथा सोना नाम–सिमरन में रुकावट बन जाते हैं। भाई साहिब भाई वीर सिंघ के मतानुसार ये परहेज हैं, जो अवश्य करने चाहिए।'' (गुरमति नाम, पृष्ठ २७)

इन बातों का ध्यान रखने से शरीर भी निरोग रहता है। भाई वीर सिंघ शरीर को निरोग रखने का उपाय बताते हैं कि अपना स्वास्थ्य अपने ख्यालों के अधीन है। हमेशा इस विचार को मन में दृढ़ करो कि मैं बिलकुल ठीक हूं! शरीर के सारे अंग हमारी मर्जी के अधीन हैं। सतिगुरु पर भरोसा रखो कि वह सदा हमारे साथ है और हमसे प्रेम करता है! शक को मन में से निकाल दो तथा अपने शरीर के अवयवों को अपने हुक्म में रखो कि सदा स्वस्थ–तंदरुस्त रहना है! हमेशा चढ़दी कला में रहो तथा निराशा को जीवन में से निकाल दो! जिसके साथ सतिगुरु है, उसे कैसा रोग? (पिआरे जीउ, पृष्ठ ३०)

दुख तथा सुख का सुमेल ही जीवन है :

सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख।।

(पन्ना १४९)

''दुख में घबराना, डगमगाना नहीं चाहिए। यदि प्रत्येक दुख के बाद हम शिक्षा लें, तब दुख, दुख नहीं रहता, बल्कि आत्मिक उन्नति की सीढ़ी के डण्डे बन जाता है। प्रत्येक दुख हमारी आत्मा को पहले से अधिक उच्च स्थान पर ले जाता है। यह अवस्था सत्संग के बिना नहीं बनती।'' (पिआरे जीउ, पृष्ठ १९)

अपने सगे–सम्बधियों के वियोग के समय, सुख के समय तथा प्रभु की कृपा के समय भी यह विचार सुखदायी होता है कि शरीर नश्वर है। यह हमेशा नहीं रहेगा। श्वास–श्वास आयु कम हो रही है, इसलिए श्वास–श्वास परमात्मा को याद रखें! इस प्रकार हमारी आयु सफल हो सकती है :

इउ रतन जनम का होइ उधारु।।

हरि हरि सिमरि प्रान आधारु।। (पन्ना २८८)

अन्त में कह सकते हैं कि हमें भाई साहिब भाई वीर सिंघ की यह बात याद रखनी चाहिए कि ''इस समय हमारे में, पंथ में, देश में तथा सारी दुनिया में जहां–जहां कमजोरियां हैं, दुख–क्लेश दिखाई दे रहे हैं, उन सबका पूरा इलाज, पूर्ण वैद्य श्री गुरु नानक देव जी का दिया गया पूर्ण दारू यह अमृत–नाम है।'' (गुरमति नाम, पृष्ठ १०)

ज्ञानी सोहन सिंघ सीतल
ढाडी-कवीशर गुरमति मिशनरी कॉलेज

गुरू की वडाली, श्री अमृतसर साहिब

प्रबंधाधीन : धर्म प्रचार कमेटी, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर साहिब

छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी द्वारा स्थापित ढाडी-कवीशर कला के संरक्षण एवं प्रचार-प्रसार हेतु धर्म प्रचार कमेटी (शि. गु. प्र. कमेटी) श्री अमृतसर साहिब द्वारा ढाडी-कवीशर गुरमति मिशनरी कॉलेज संचालित किया जा रहा है, जिसमें तंती साज़—सारंगी, तानपूरा (ढड्ड) और कवीशरी का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

शैक्षिक योग्यता +२ उत्तीर्ण, विद्यार्थी अमृतधारी हो

दाख़िला शुरू
2023-25

- उत्तम रिहायश, खुला वातावरण, सुंदर और हवादार इमारत।
- मेहनती और तजुर्बेकार स्टाफ।
- विद्या और रिहायश मुफ़्त।
- गुरबाणी संथा।
- १५००/- रुपए प्रति महीना वज़ीफ़ा (लंगर-ख़र्च)।
- गतका प्रशिक्षण।
- कोर्स पूरा कर चुके योग्य विद्यार्थियों को संस्था/संबंधित अदारों में भर्ती के समय प्राथमिकता।

नोट:-
दाख़िला फार्म ऑनलाइन भी मंगवा सकते हैं।

gsssdkgmc@gmail.com | ज्ञानी सोहन सिंघ सीतल ढाडी-कवीशर गुरमति मिशनरी कॉलेज

गोल्डन ऑफसेट प्रेस, श्री अमृतसर साहिब

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :-

94630-94017 (प्रिंसिपल), 87279-83111

द्वारा,
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी,
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर साहिब।

Registered with RNI at No. PUNHIN/2007/21665
Postal Registration No. L-1/PB-ASR/008/2023-25 Licensed to Post without Pre-Payment No. PB/R-001/2023-25

GURMAT GYAN June 2023

DHARAM PARCHAR COMMITTEE,
Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee, Sri Amritsar Sahib (PUNJAB)

घल्लूघारा जून 1984 ई. के समय क्षतिग्रस्त हुई
श्री अकाल तख़्त साहिब की इमारत का बाहरी दृश्य

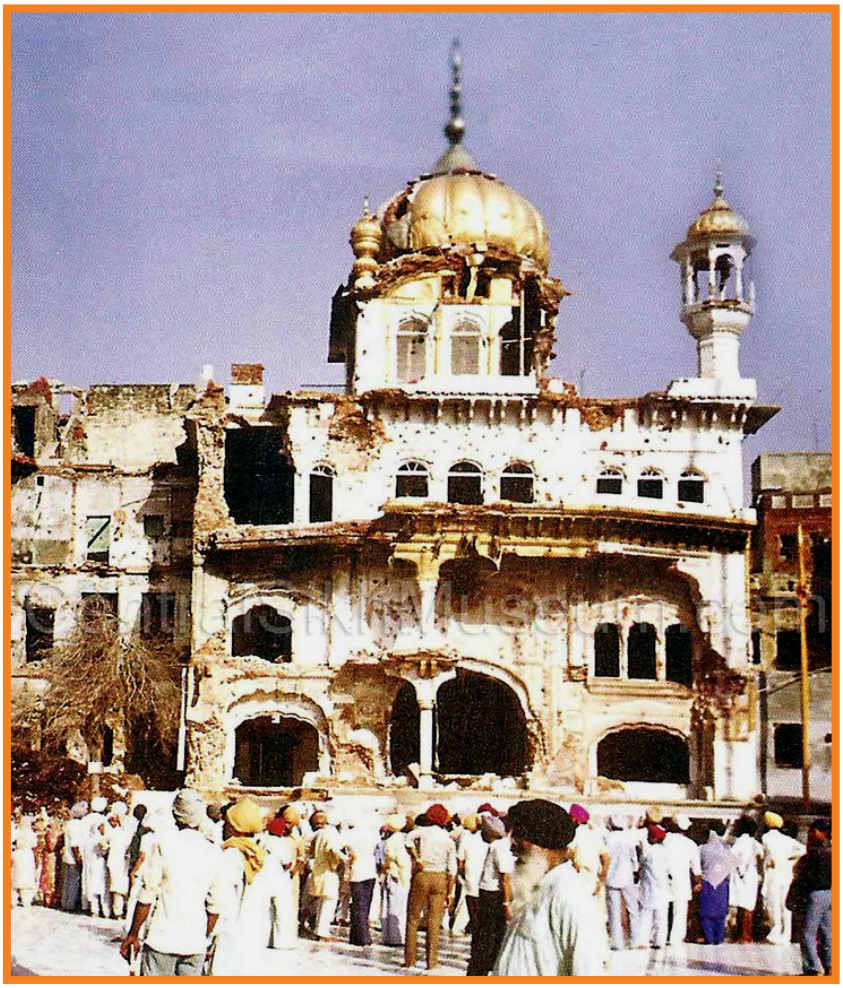

Owner : Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee. Publisher & Printer : S. Manjit Singh. Printed at Golden Offset Press, Gurdwara Sri Ramsar Sahib, Sri Amritsar. Published from SGPC office, Teja Singh Samundri Hall, Sri Amritsar. Editor : Satwinder Singh
Date : 7-6-2023